श्रीरामकृष्ण-विवेकानंद भावधारा की एकमात्र हिंदी मासिकी

वर्ष—११ अक्टूबर-१९९२ अंक—१०

रामकृष्ण निलयम्, जयप्रकाश नगर, छपरा-८४१ ३०१ (बिहार)

विवेक शिखा के आजीवन सदस्य

११. श्रीमती कमला घोष—इलाहाबाद
१२. श्री एल. डी. शर्मा—अहमदाबाद
१३. श्रीमती प्रभा आनंद—बीकानेर (राजस्थान)
१४. श्री अखिलेश मिश्र—नारायणपुर (मध्य प्रदेश)
१५. श्री के० डी० सरोज—बम्बई
१६. श्री ए० के० चटर्जी, आइ. ए. एस.—पटना
१७ सचिव, विवेकोज्जीवन संघ—छपरा (बिहार)
१८. श्री सुभाष वासुदेव—लुमडिंग (आसाम)
१९. श्री दिलीप देसाई, बरोदा (गुजरात)
१००. श्रीरामकृष्ण आश्रम—इन्दौर (म० प्र०)
१०१. शारदापीठ विद्यालय – इन्दौर (म० प्र०)
१०२. डॉ० सोमप्रकाश वर्मा—रायपुर (म० प्र०)
१०३. विवेकानन्द विद्यापीठ—भोपाल (म० प्र०)
१०४. रामकृष्ण मठ—बामतारा (बिहार)
१०५. श्री सुनील खण्डेलवाल—रायपुर (मध्य प्रदेश)
१०६. श्री बसन्त लाल गुप्ता—नागपुर (महाराष्ट्र)
१०७. श्री जयेश ब्रह्मभट्ट—पुणे (महाराष्ट्र)
१०८. श्री नरेन्द्र कुमार डाल—अजमेर (राजस्थान)
१०९. श्री महन्त पुखिरामजी—जोधपुर (राजस्थान)
११०. श्री राय मनेन्द्र प्रसाद जमशेदपुर (बिहार)
१११. कुमारी उषा हेगड़े—पुणे (महाराष्ट्र)
११२. श्री विनय प्रकाश—पुणे (महाराष्ट्र)
११३. डॉ० बी० डी० सिन्हा– रीवाँ (मध्य प्रदेश)
११४. डॉ० एच० बी० सिंह – रीवाँ (मध्य प्रदेश)
११५. मानस समिति, लुमडिंग (आसाम)
११६. श्रीरामचन्द्र गुप्त, लुमडिंग (आसाम)
११७. श्री चन्द्रकान्त स० नागपुरे (नागपुर)
११८. श्री अच्छे लाल श्रीवास्तव (उ० प्र०)
११९. संत जगदम्बिका (प्रयाग)
१२०. श्री अजय बलदवा, जयपुर (आसाम)
१२१. श्री डी० एस० दुबे, पुणे (महाराष्ट्र)
१२२. श्री बासीराम शर्मा, लुमडिंग (आसाम)
१२३. श्रीमती चन्द्रिका कालरा (बम्बई)
१२४ श्रीरामकृष्ण आश्रम, श्रीनगर (कश्मीर)
१२५. श्रीमती छवि सिंह, गाजीपुर (उ० प्र०)
१२६. विवेकानन्द युवा महामंडल, इन्दौर (म० प्र०)
१२७. श्री आनन्द यश चोपड़ा, अलॉंग (अरुणाचल प्रदेश)

इस अंक में

		पृष्ठ
१. श्री रामकृष्ण ने कहा है		१
२. श्रीदुर्गानाम संकीर्तनम्		२
३. गृहस्थ धर्म	श्रीमत् स्वामी रंगनाथानन्द	५
४. माँ दुर्गा : साक्षात् ब्रह्मस्वरूपिणी	डॉ० असिफ रोहतासवी	१४
५. जैन धर्म में शक्ति उपासना	प्रो० लाल मोहर उपाध्याय	१६
६. श्रीरामकृष्ण की अंत्यलीला	स्वामी प्रभानन्द	१७
७. युवशक्ति प्रवाह के भगीरथ विवेकानन्द	स्वामी शशांकानन्द	२०
८. मदालसा	स्वामी विवेकानन्द	२३
९. अध्यात्म विद्या में भारतीय नारियों का योगदान	श्री परशुराम ठाकुर ब्रह्मचारी	२६

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत
उठो जागो और लक्ष्य प्राप्त किए बिना विश्राम मत लो

विवेक शिखा

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द-भावधारा की एकमात्र हिन्दी मासिकी

वर्ष—११ | १९९२—अक्टूबर | अंक—१०

इष्टदेव का हृदय-कमल में रूप अनूप दिखा। निजानन्द में रखती अविचल विमल 'विवेक शिखा'॥

संपादक :
डॉ० केदारनाथ लाभ

संपादकीय कार्यालय
रामकृष्ण निलयम्
जयप्रकाश नगर,
छपरा—८४१३०१
(बिहार)
फोन : ०६१५२-२६३९

सहयोग राशि

आजीवन सदस्य—	५०० रु०
वार्षिक—	३० रु०
रजिस्टर्ड डाक से—	४५ रु०
एक प्रति—	४ रु०

रचनाएँ एवं सहयोग-राशि संपादकीय कार्यालय के पते पर ही भेजने की कृपा करें।

श्रीरामकृष्ण ने कहा है

(१)

जिस प्रकार समुद्र के भीतर छिपा हुआ चुम्बक का पहाड़ अपने ऊपर से किसी जहाज के गुजरते ही तुरन्त उसे खींच उसके कल-पुर्जों को ढीला कर, पटियों को अलग-अलग कर पानी में डुबो देता है, उसी प्रकार ईश्वररूपी चुम्बक का आकर्षण होने पर वह मनुष्य के अहंकार और स्वार्थ से पूर्ण जीवन को क्षण भर में तोड़-फोड़कर ईश्वर के प्रेम सागर में डुबो देता है।

(२)

साँप को पकड़ने जाओ तो तुरन्त काट खाता है, पर कोई अगर उसका मन्त्र जान ले तो कई साँपों को अपने गले में लपेट कर खेल दिखला सकता है। उसी प्रकार, ज्ञानलाभ कर लेने के पश्चात् मनुष्य पर कामिनीकांचन का परिणाम नहीं होता।

(३)

दूध को पानी में छोड़ दो तो वह पानी के साथ मिलकर एक हो जाता है, परन्तु यदि उसका मक्खन बना लिया जाय तो फिर वह पानी में नहीं मिलता, तब वह पानी पर तैरने लगता है। इसी तरह, ईश्वरलाभ कर लेने के पश्चात् मनुष्य हजारों संसारासक्त बद्ध जीवों के बीच रहकर भी स्वयं बद्ध नहीं होता।

(४)

पतंगें लाखों में एक-दो ही कटती हैं। इसी तरह सैकड़ों साधक साधना करते हैं, पर उनमें एक या दो ही भवबन्धन से मुक्त हो पाते हैं।

श्री दुर्गानाम संकीर्तनम्

ॐ नमश्चण्डिकायै

ध्यानम्

या चण्डी मधुकैटभादिदैत्यदलनी या माहिषोन्मूलिनी
या धूम्रेक्षणचण्डमथनी या रक्तबीजाशनी ।
शक्तिः शुम्भनिशुम्भदैत्यदलनी या सिद्धिदात्री परा
सा देवी नवकोटिमूर्तिसहिता मां पातु विश्वेश्वरी ॥

स्तवनम्

देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ॥
आधारभूता जगतस्त्वमेका महीस्वरूपेण यतः स्थितासि ।
अपां स्वरूपस्थितया त्वयैतदाप्यायते कृत्स्नमलंघ्यवीर्ये ॥
त्वं वैष्णवीशक्तिरनन्तवीर्या विश्वस्य बीजं परमासि माया ।
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत् त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ॥
विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकलाजगत्सु
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत् का ते स्तुतिः स्तव्यपरापरोक्तिः ॥

★

ॐ दक्षयज्ञविनाशिन्यै महाघोरायै योगिनीकोटिपरिवृतायै भद्रकाल्यै ह्रीं दुर्गायै नमः ।

संकीर्तनम्

दुर्गे दुर्गतिहारिणि अम्ब ।
काली कालभयवारिणि अम्ब ॥ध्रु०॥

१. परब्रह्म परमे प्रकृते परशक्ते जगदाये अम्ब
२. आत्मबोधरूपे परविद्ये निगमागमप्रतिपाद्ये अम्ब
३. एकेऽनन्तेऽज्ञेयेऽलक्ष्ये व्यक्तेऽव्यक्ताकारिणि अम्ब
४. स्वात्मारामे प्रत्यग्रूपे कूटस्थे गम्भीरे अम्ब
५. सुदुर्लभे दुस्तरे दुर्गमे स्वस्थे धीरे वीरे अम्ब
६. परात्परे परकत्वे सत्त्वे महाशक्तिसंचारिणि अम्ब
७. अजेऽद्वितीयेऽनिर्वचनीये सर्वातीते सकले अम्ब
८. अवाङ्मनसगोचरेऽप्रमेये स्वयंप्रभेऽनन्तबले अम्ब
९. इच्छाज्ञानक्रियाशक्तिके सृष्टिस्थितिलयकारिणि अम्ब
१०. नित्ये सत्ये शाश्वति भगवति विज्ञाने सर्वज्ञे अम्ब
११. जाग्रद्रूपे स्वपन्ति सुप्ते विश्वतैजसप्राज्ञे अम्ब
१२. सर्वावस्थातीते तुर्ये निरुपाधिकेऽविकारिणि अम्ब
१३. वाणि परे पश्यन्ति मध्यमे वैखरि परवाग्वादिनि अम्ब
१४. वेदजननि चिच्छक्ते संविद्रूपे संन्धिनि ह्लादिनि अम्ब
१५. वागीश्वरि वाङ्मये व्यक्षरे प्रणवनादनिस्सारिणि अम्ब
१६. पंचाशद्वर्णिके मातृके नादात्मिके मन्त्रमयि अम्ब
१७. क्षराक्षरे सर्वश्वतिसारे स्वरात्मिके वेदत्रयि अम्ब
१८. सर्वोपनिषद्वेद्ये साध्ये मायावरणनिवारिणि अम्ब
१९. सगुणनिर्गुणे लीलानिपुणे साकारनिराकारे अम्ब
२०. केवल्ये निष्कले निश्चले विमले प्रपंचसारे अम्ब
२१. नीरोगे निर्ममे निर्मदे रागद्वेषविदारिणि अम्ब
२२. सन्ध्ये सावित्रि गायत्रि जय जगद्धात्रि जगदीश्वरि अम्ब
२३. जयन्ति जयदे जगदानन्दे जगज्जननि विश्वम्भरि अम्ब
२४. ब्रह्माण्डोदरि करुणासागरि शुभकरि संकटहारिणि अम्ब
२५. स्वाहे स्वधे वषट्कारे जय तुष्टे पुष्टे कान्ते अम्ब
२६. श्रद्धे मेधे शुद्धे बुद्धे सिद्धे शान्ते क्षान्ते अम्ब
२७. ध्रुवे विष्णुमाये भवजाये भ्रान्तिस्मृतिसंचारिणि अम्ब
२८. अघटनघटनपटीयसि माये द्वैताद्वैतवर्जिते अम्ब
२९. मोक्षद्वारकपाटोत्पाटिनि संसृतिबीजमर्जिते अम्ब
३०. विश्वे विश्वात्मिके व्यापिके विश्वचराचरधारिणी अम्ब
३१. प्रसुप्तशक्तेऽकुले कुण्डलिनि ललिते परशिववलिते अम्ब
३२. निखिलागमनिगमद्रुमफलिते दिव्यप्रभावलयिते अम्ब
३३. त्रिपुरे सुन्दरि सौन्दर्यलहरि महापद्मवनचारिणि अम्ब

३४. मरालि मूलाधारनिलयने ब्रह्मग्रन्थिविभेदिनि अम्ब
३५. मणिपूरान्तरुदिते प्रमुदिते विष्णुग्रन्थिच्छेदिनि अम्ब
३६. आज्ञान्तरालसंस्थे भद्रे रुद्रग्रन्थिविदारिणि अम्ब
३७. सहस्रारपद्मसमारूढे दिव्यामृतनिस्स्यन्दिनि अम्ब
३८. करुणापांगे सुधातरंगे समस्तभुवनानन्दिनि अम्ब
३९ अन्तर्यामिणि निखिलस्वामिनि विशुद्धहृदयागारिणि अम्ब
४० सौम्ये रौद्रे स्थूले सूक्ष्मे सत्ते परचैतन्ये अम्ब
४१. दाक्षायणि दक्षराजकन्ये सति भुवनत्रयधन्ये अम्ब
४२. साध्वि दक्षयज्ञविनाशिनि जय घोरभवार्णवतारिणि अम्ब
४३. हिमगिरिनन्दिनि मेनातनुजे पार्वति गिरिजेऽपर्णे अम्ब
४४. उमे तपस्विनि शंकरकामिनि गौरी कनकमयवर्णे अम्ब
४५. शिवानुरागिणि परमविरागिणि शिवलीलासहचारिणि अम्ब
४६. शरच्चन्द्रकिरणोज्ज्वलकान्ते सोमार्धांकितभाले अम्ब
४७. उद्यद्भानुसहस्रसंनिभे हैमे हिमवति बाले अम्ब
४८. दिव्याम्बरि दिव्याभूषणधरि मुक्तकेशसम्भारिणि अम्ब
४९. कुन्दोज्ज्वलरदने शशिवदने पदनखनिर्जितमदने अम्ब
५०. सर्वजीवहृदयगुहासदने दुर्दमरिपुदलकदने अम्ब
५१. चन्द्रसूर्यवह्निनेत्रशालिनि दिव्यज्ञानप्रसारिणि अम्ब
५२. शैलसुते ब्रह्मचारिणि जये चन्द्रघण्टिके चण्डे अम्ब
५३ स्कन्दजननि कात्यायनि मातः कालरात्रि कूष्माण्डे अम्ब
५४. महागौरि सिद्धिदात्रि वरदे नवदुर्गातनुधारिणि अम्ब
५५. ब्रह्माणि कौमारि माहेश्वरि वैष्णवि वाराहि वरे अम्ब
५६. ऐन्द्रि नारसिंहि मातृशक्ते शिवदूति विभूतिवरे अम्ब
५७. अट्टहासताण्डवलासरते मोहध्वान्तनिवारिणि अम्ब
५८. देवि दशमहाविद्यारूपे शिवे कालिके तारे अम्ब
५९. षोडशि भैरवि भुवनेश्वरि जय कमले त्रिभुवनसारे अम्ब
६०. मातंगि छिन्नमस्ते बगले धूमावति निस्तारिणि अम्ब
६१. रक्तदन्तिके शाकंभरिके शताक्षि भीमे भामरि अम्ब
६२. कृष्ण नारायणि चतुरा महेश्वरी अम्ब
६३ अवतारे जगदेकावारे बहुलीलाविस्तारिणि अम्ब
६४. जटिनि कपर्दिनि भीषणनर्दिनि दैत्यसंघभयवर्द्धिनि अम्ब
६५. भवानि मधुकैटभसंहारिणि जय महिषासुरमर्दिनि अम्ब
६६. विविधायुधधरि घोरयुद्धकरि क्रुद्धे बहुभुजधारिणि अम्ब
६७. विरूपाक्षि ज्वालामुखि कौशिकि धूम्रविलोचनघातिन अम्ब
६८. चामुण्डे चण्डमुण्डमथने रक्तबीजविनिपातिनि अम्ब
६९. चण्डि चण्डिके विघ्नखण्डिके शुम्भनिशुम्भविदारिणि अम्ब
७०. योगिनि महायोगनिद्रे भवविमोहिनि महामाये अम्ब
७१. महारात्रि मोहरात्रि तामसि मायाधीश्वरजाये अम्ब
७२. समस्तजम्भिनि सर्वस्तम्भिनि सर्वोन्मादनकारिणि अम्ब
७३. सर्वोकर्षिणि सुधाभिवर्षिणि साधकहृदयोत्कर्षिणि अम्ब
७४. अधमर्षिणि दर्पगर्वघर्षिणि कामरागबलघर्षिणि अम्ब

७५ विषयवनदवानले मंगले भवतृष्णापरिहारिणि अम्ब

७६. महाकालकलने हरललने महाकालसंग्रसने अम्ब

७७ करालदशने बिलोलरसने शवासने दिग्वसने अम्ब

७८. मेघांगि शिवारूढे गूढे श्यामे कलिमलहारिणि अम्ब

७९. नृकपालिनि नरमस्तकमालिनि ज्वालिनि खरकरवालिनि अम्ब

८०. सदकालि भवचालिनि पालिनि दानवदलनिदालिनि अम्ब

८१. जटाजूटजाले विकराले भामे समरविहारिणि अम्ब

८२. शंखिनि चक्रिणि खड्गिनि चापिनि पाशिनि गदिनि त्रिशूलिनि अम्ब

८३. रुद्राणि महाभ्रमविध्वंसिनि संसारमदोन्मूलिनि अम्ब

८४. शोकार्णवशोषिणि भवतोषिणि दुरितविदूरणकारिणि अम्ब

८५. एकाकिनि योगिनीपरिवृते पावनकरि मंदाकिनि अम्ब

८६. डाकिनि राकिणि लाकिनि काकिनि शाकिनि हाकिनि याकिनि अम्ब

८७. भयंकरि प्रलयंकरि शंकरि सर्वशकरि भारिणि अम्ब

८८. रम्ये लास्यप्रिये सुहास्ये लीलाविलासचपले अम्ब

८९. केलिपरे खेलन्ति चित्कले क्रीडाकुशले सफले अम्ब

९०. हरार्धनारि नटेश्वरि नटने हरहृदिनर्तनकारिणि अम्ब

९१. हेरम्बजननि सुरविघ्नहननि ब्रह्मविष्णुशम्भुनुते अम्ब

९२. देवकार्यसाधिनि खलवाधिनि शक्रादिसुरसंस्तुते अम्ब

९३. साधुसमाधिविमोक्षविधायिनि सुरथभोगसुखकारिणि अम्ब

९४. शरत्कालबोधिते शारदे सच्चित्सौख्यसारदे अम्ब

९५. राज्ञि राजराजेश्वरि रम्ये भवखण्डनविशारदे अम्ब

९६. केसरिवाहिनि भववनदाहिनि पुनरागमविनिवारिणि अम्ब

९७ अन्तरवासिनि हृदयोद्भासिनि चित्तसरोजविकासिनि अम्ब

९८. कर्मपाशनाशिनि भवशासिनि मूलाविद्याग्रासिनि अम्ब

९९. सिद्धिदायिनी मुक्तिहेतुके कल्याणगुणाधारिणि अम्ब

१००. आधिव्याधिविकारविभंजिनि तामसजडतागंजिनि अम्ब

१०१. जननमरणजगदजालभंजिनि सदाशिवमनोरंजिनि अम्ब

१०२. त्रिभुवनपावनि साधुजनावनि सनातनि विपत्तारिणि अम्ब

१०३. भक्तचित्तवांछाकल्पलते चतुर्वर्गफलदायिनि अम्ब

१०४. शिवानि जीवशिवैक्यविधायिनि परपुरुषार्थसहायिनि अम्ब

१०५. पाशनिवारिणि पशुताहारिणि शिवताप्रकटनकारिणि अम्ब

१०६. अशरणशरणे पतितोद्धरणे त्रिलोकवन्दित चरणे अम्ब

१०७. अहेतुकदयाघने प्रसन्ने त्रितापबाधाहरणे अम्ब

१०८. भयार्तिहारिणि क्लेशनिवारिणि भक्तानुग्रहकारिणि अम्ब

प्रणामः

सर्वमंगलमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ॥
सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि ।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तुते ॥
शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तुते ॥

गृहस्थ-धर्म

श्रीमत् स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज
परम उपाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन

[परम पूजनीय श्रीमत् स्वामी रंगनाथानन्दजी महाराज ने छपरा (बिहार) में श्रीरामकृष्ण अद्भुतानन्द आश्रम का समर्पण ११ अप्रैल, १९९२ को किया था। इस अवसर पर आयोजित त्रिदिवसीय समारोह में १२ अप्रैल, ९२ को संध्या ६-३० बजे 'गृहस्थ-धर्म' पर जो भाषण उन्होंने हिन्दी में दिया था उसे टेप रेकर्ड से अनुलेखन कर यहां अविकल प्रस्तुत किया जा रहा है। अनुलेखन कर्त्ता हैं—डॉ० केदारनाथ लाभ एवं श्री रवीश कुमार सं०।]

(१) प्रस्तावना :

भक्त गण,

कल हिन्दी में बोलने की इच्छा थी, किन्तु केदारनाथ लाभ ने कल अंग्रेजी में भाषण करने को कहा। सो कल अंग्रेजी में बोला और आज हिन्दी में बोलूँगा।

हमारे देश में बहुत सी भाषाएँ हैं। एक एक जगह की एक एक भाषा है। केरल जाता हूँ, वहाँ मलयालम में भाषण देना पड़ता है, तमिलनाडु में तमिल भाषा में, कर्नाटक में कन्नड़ भाषा में, बंगाल में बंगला भाषा में और यहाँ हिन्दी में बोलना पड़ता है। ये सभी भाषाएँ हमारी भाषाएँ हैं, हमारे देश की भाषाएँ हैं। भाषाएँ अलग अलग हैं, किन्तु विषय एक ही है, संस्कार एक ही है। अनेक भाषाओं के द्वारा हम एक ही संस्कार को प्रकट करते हैं। यही है भारत देश।

कल इस आश्रम का उद्घाटन हुआ। इस आश्रम की कुछ कहानी अभी हमारे एम० एल० ए० उदित राय ने बतायी। आपको यह सुनने से बहुत खुशी हुई होगी। हैदराबाद में आंध्र प्रदेश की सरकार के मंत्रिमंडल के सदस्य एवं प्रशासनिक अधिकारीगण स्वामी विवेकानन्द एवं श्रीरामकृष्ण के बारे में कुछ-कुछ जानते हैं। सो एक दिन स्वयं वहाँ के मुख्य मंत्री आकर मुझसे मिले और वहाँ के आश्रम के लिए जमीन देने के वास्ते आवेदन पत्र (Application) ले गये और पाँच महीनों के अन्दर पाँच एकड़ जमीन मुझे दे दी। कोई तकलीफ नहीं हुई। ऐसे कामों में दस साल तक लग जाते हैं, लेकिन पाँच महीनों के अन्दर वहाँ की सरकार ने आश्रम को जमीन दे दी। उस आश्रम के Development (विकास) के वास्ते मैंने ३३ लाख रुपये का Programme (कार्यक्रम) रखा था। मैंने मुख्य मंत्री से कहा, आप इसके दो तिहाई रुपये सरकार से दे दें। उन्होंने कहा, "दो तिहाई क्यों, हम पूरे का पूरा रुपया देंगे। यह हमारे लिए गौरव की बात है कि हैदराबाद शहर में, आंध्र प्रदेश की राजधानी (Capital) में विवेकानन्दजी के नाम पर एक आश्रम बन रहा है। यह हमारे लिए गौरव का विषय है।" उन्होंने फिर पूछा—'और क्या चाहिए?' मैंने कहा, 'Finance Secretary, Education Secretary (वित्त सचिव, शिक्षा सचिव) से बातचीत करने मैं कल सचिवालय आता हूँ।' उन्होंने कहा, 'नहीं, आप क्यों आइएगा? मैं उन लोगों को आश्रम में भेजूँगा—आप के साथ बात चीत करने के लिए।' सो, इस आश्रम में वे आये। बातचीत की और २२ लाख रुपया Sanction

(स्वीकृत) किया आश्रम के विकास के लिए, अपने विभाग से। उसके २-३ साल के बाद और ५ लाख रुपये दिये और तिरुपति देवस्थानम् ने १२ लाख रुपये दिये। करीब ६० लाख रुपये खर्च करके एक नूतन आश्रम का विकास हुआ। इसके साथ-साथ ३ एकड़ जमीन आसपास में और भी मिली। सो, कुल ८ एकड़ जमीन में आश्रम, नूतन आश्रम अभी चल रहा है। श्री बेंगल राव जो अभी भारत सरकार के उद्योग मंत्री हैं, उस वक्त Chief Minister (मुख्यमंत्री) थे हैदराबाद में।

(२) रामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा के प्रचार की जरूरत :

मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ, कि जहाँ-जहाँ लोगों ने रामकृष्ण विवेकानन्द साहित्य को पढ़ा है उन लोगों के हृदय में यह भावना पनपी है कि वे (रामकृष्ण विवेकानन्द) हमारे देश की उन्नति के वास्ते हैं, सब की उन्नति– हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, आदिवासी और गैर आदिवासी—सब की उन्नति के वास्ते। यह बोध आता है रामकृष्ण-विवेकानन्द साहित्य पढ़ने से। यह बोध जब हमारे समूचे देश में हो जायगा तो देश की उन्नति और प्रगति हो जायगी। अभी थोड़ी स्थगित हो गयी है। इसको ठीक करने के वास्ते श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा के प्रचार की बहुत जरूरत है।

(३) गृहस्थ धर्म : आज का विषय :

मैं आज एक विषय पर बोलना चाहता हूँ—गृहस्थ धर्म पर। लोग कहते हैं कि हम तो गृहस्थ हैं। ज्यादा लोग गृहस्थ हैं, संन्यासी कम लोग हैं। लेकिन इस राज्य में—बिहार में एक समय ज्यादा संन्यासी थे। गृहस्थ लोग कम थे। गृहस्थ धर्म का ऐसा घोर पतन हो गया था। इस राज्य का नाम है बिहार। बिहार कहने से मठ-आश्रम का बोध होता है। सो मठ की अधिकता से इसका नाम बिहार हुआ। इसका फल यह हुआ कि पहले तो मठ अच्छा रहा। बाद में हर आदमी साधु बनकर बिल्कुल आलसी हो गया। कोई काम नहीं करता है—ऐसा हुआ। आदमी नीचे गिर गया। उस युग में धर्म के सम्बन्ध में बहुत सारी भ्रान्तियाँ थीं। लोग अमर धर्म को नहीं जानते थे। सो इस युग में गृहस्थों को स्थान दिलाने, उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए श्रीरामकृष्ण, माँ सारदा देवी और स्वामीजी आये। श्रीरामकृष्ण स्वयं गृहस्थ थे, सारदा देवी गृहस्थ थीं। इन दोनों ने गृहस्थ आश्रम की महिमा बढ़ायी। अभी तक हम अपनी बहुत अवहेलना कर रहे थे। मैं सारे भारत में भ्रमण करता हूँ, सर्वत्र लोग यही कहते हैं—'हम तो संसारी हैं, हम तो संसारी हैं, हम क्या कर सकते हैं ?' अपनी ऐसी अवहेलना इस संसार में गृहस्थ लोग करते हैं। यह बिल्कुल गलत बात है, शास्त्र के विरुद्ध है, और देश की उन्नति के विरुद्ध है। इसी वजह से गृहस्थों को एक अभिमान देने गौरव देने, एक शक्ति देने के वास्ते ये अवतार पुरुष आये थे। ये अवतार गृहस्थ के अधीन हैं। सारी दुनिया, सारा समाज गृहस्थ के अधीन है। इसी वास्ते मैं आज इसके विषय में थोड़ा बोलना चाहता हूँ।

(४) श्रीरामकृष्ण : गृहस्थ धर्म के पुनर्प्रतिष्ठाता।

'श्रीरामकृष्ण वचनामृत' नामक ग्रन्थ में ऐसे कई अध्याय हैं जहाँ श्रीरामकृष्ण गृहस्थ धर्म के बारे में भक्तों को स्पष्ट शब्दों में उपदेश देते हैं। कोई गृहस्थ पूछता है श्रीरामकृष्ण से 'हमलोग गृहस्थ हैं, हम ईश्वर को कैसे प्राप्त कर सकते हैं ?' 'क्यों नहीं प्राप्त कर सकते ? ईश्वर सब के अंदर हैं। वे अन्तर्यामी हैं। तुम लोग उन्हें याद करो। सब ठीक हो जायगा।'—श्रीरामकृष्ण गृहस्थों को इस प्रकार प्रोत्साहित करते हैं, कई-कई अध्यायों में। इस समय हमें समझना चाहिए कि गृहस्थ गृह में स्थित रहकर कार्य करता है। लेकिन गृह में आने की, जाने की, स्वाधीनता तुम्हारी है। इसीलिए गृहस्थी है, नहीं तो घर Prison (कारागार) हो जायगा। लेकिन घर कारागार नहीं है।

गृहस्थी है—Freedom-Freedom (स्वाधीनता-स्वाधीनता) स्वाधीनता के बिना घर जेल—कारागार हो जायगा। सो, अपने देश में गृहस्थ-जीवन जेल-जीवन हो गया। हमारा मन गृहस्थ-जीवन के बाहर नहीं गया था। खाली एक छोटे वृत्त (Small circle) के बीच में हम रह गये थे। विशाल भाव हमने खो दिया था। बहुत संकीर्ण मन हो गया था। केवल आमी और आमार (ऐसा बंगला में कहते हैं)। श्रीरामकृष्ण कहते हैं—आमी और आमार—मैं और मेरा को हटाना होगा। हमलोग केवल 'मैं' और 'मेरा' जानते हैं, और कुछ नहीं जानते। हम यह नहीं जानते हैं कि इस देश की हालत क्या है, हजारों लोग किस प्रकार भूख और कष्ट का अनुभव करते हैं, इन सबके बारे में हम कुछ नहीं जानते हैं। हमने अपने घर को जेल बनाकर मानो छोड़ दिया था। इसके फलस्वरूप ८०० वर्षों तक हम नीचे गिर गये थे। विदेशी आक्रमण हुए और हमारी स्वतंत्रता समाप्त हो गयी थी। तब इस युग में श्रीरामकृष्ण ने आकर गृहस्थों को एक सच्चा वास्तविक मार्ग दिखाया और उन्हें एक गौरव प्रदान किया।

गृहस्थाश्रम : ज्येष्ठ आश्रम :

मनुस्मृति में एक श्लोक है। श्लोक मैं सुनाना चाहता हूँ, जिससे आप जानेंगे कि गृहस्थ का महत्व कितना बड़ा है। कहा है—

यस्मात् त्रयोऽप्याश्रमिणो ज्ञानेनान्नेनचान्वहम्।
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृही॥
(३/७७)

सब आश्रमों से गृहस्थ आश्रम ज्येष्ठ आश्रम है। ज्येष्ठ आश्रम है, कारण सब आश्रमों के लोगों को अन्न और विद्या एक गृहस्थ आश्रम ही देता है, और कोई नहीं। ब्रह्मचारी कुछ अर्थ उपार्जन नहीं करता, वानप्रस्थी उपार्जन नहीं करता और संन्यासी भी कुछ अर्जन नहीं करता। समाज में जो सदस्य अर्जन करते हैं, उत्पादक कार्य करते हैं, जो समस्त समाज का पोषण करते हैं, वे हैं गृहस्थ। एक गृहस्थ इतने काम करता है और अपनी अवहेलना भी करता है। उसे अपने कार्य के ऊपर गौरव होना चाहिए। गृहस्थ के बल पर ही यह समाज चलता है। यस्मात् त्रयोऽपि आश्रमिणो ज्ञानेनान्नेन च। ज्ञान और अन्न ये दोनों साथ साथ चलते हैं और नित्य चलते हैं। गृहस्थेनैव धार्यन्ते—एक गृहस्थ ये दोनों कर्म करते हैं। तस्मात् ज्येष्ठाश्रमो गृही। अतएव, सभी आश्रमों से श्रेष्ठ गृहस्थ आश्रम है। अब इस युग में, मनु ने जो कहा है, वह एक नयी भाषा में हमारे सामने आता है। वह है Citizen Power यानी नव नागरिक। नागरिक के अन्दर केवल अपने घर के विषय में चिन्तन नहीं होता। उसके मन में सारे देश की उन्नति का भाव रहता है। वह जब कोई कार्य इस भाव से करता है कि उससे देश की उन्नति हो जाय तब वह असल गृहस्थ होता है। इसीलिए आज के गृहस्थ को Citizen—नागरिक—होना चाहिए। नागरिक होने से मन में विशाल भाव आता है। सब लोगों की उन्नति का भाव मन में रहता है। सब की उन्नति के लिए वह कोशिश करता है। इसीलिए असल गृहस्थ Citizen नागरिक है। नहीं तो वह केवल नाम के लिए गृहस्थ मात्र बनकर रह जाता है। संसद हमें २१ वर्ष में वयस्क मानकर नागरिकता प्रदान करती है—वोट देने के योग्य मानती है। इन दिनों १८ वर्ष की उम्र में चुनाव में मत देने का अधिकार मिलता है। लेकिन वह बाहर का माप है। अन्दर में आपको राष्ट्रीय उत्तरदायित्व, सामाजिक उत्तरदायित्व का भाव रखना होगा। सदैव हमारे मन में समाज की उन्नति का भाव रहना चाहिए। यह भाव होना चाहिए कि मैं जो कुछ काम करूँगा उससे समाज की उन्नति होगी। यह है Citizen नागरिक का असल स्वभाव।

नागरिकता—गृहस्थी—के अन्दर दो मूल्य हैं।

एक तो है – स्वतंत्रता। आदमी स्वतंत्र है। नागरिक स्वतंत्र है। और दूसरा है—दायित्व। स्वतंत्रता के साथ दायित्व का बोध। नागरिक को राष्ट्रीय दायित्व का भाव भी अपने मन में रखना होता है। इन दोनों के एक साथ होने से व्यक्ति नागरिक बन जाता है, गृहस्थ बन जाता है। वर्तमान काल में अपने देश में ऐसे लाखों नागरिकों को तैयार होना होगा। श्रीरामकृष्ण इसी के लिए आये हैं। वे लोगों में जीने की शक्ति प्रदान करते हैं—अपने भीतर के आत्म चैतन्य में विश्वास करने, श्रद्धा रखने को कहते हैं। स्वामी विवेकानन्द ने बार-बार आत्मश्रद्धा पर जोर दिया है, उन्होंने कहा है कि तुम में तेंतीस कोटि देव देवियों के प्रति श्रद्धा है, लेकिन तुम्हारा कुछ नहीं हुआ। कारण तुम्हें अपने ऊपर श्रद्धा नहीं थी। पहले अपने ऊपर श्रद्धा रखो फिर देव-देवियों पर श्रद्धा रखो—ऐसा स्वामी विवेकानन्द जी ने एक भाषण में कहा था। अतः असल गृहस्थ होने के लिए आत्म श्रद्धा, आत्म-निर्भरता, मैं यह कार्य करूँगा ऐसा भाव आवश्यक है। यह भाव हमारे देश के लोगों ने खो दिया था। एक ही भाव रह गया था – मैं तो गृहस्थ हूँ, मैं तो संसारी हूँ, मेरा तो नर-दुर्बल जीवन है – यह भाव था। इस भाव को छोड़ कर, मन को विशाल बनाकर, देश की उन्नति का दायित्व लेकर मैं चलूँगा—यह हमने नहीं किया था। इस कारण ८०० वर्षों का हमारा इतिहास खराब हो गया।

अब हमें गृहस्थ होने से ग्लानि के भाव का त्याग करना होगा। यह भाव रखना होगा कि मैं स्वाधीन भारत का नागरिक हूँ। यह स्वाधीन भारत है। अब यहाँ कोई राजा-महाराजा नहीं है। एक नागरिक का अर्थ है एक राजा। यह प्रजातंत्र है। प्रजातंत्र में नागरिकता ही सर्वोच्च है। अतः हमारे ऊपर इतना भार आ गया है, पृथ्वी को उपग्रह में छोड़ने के बाद, संविधान स्वीकार करने के बाद हम पर दायित्व भी बढ़ा है। हमलोग यह भूल गये थे कि हमारे ऊपर राष्ट्रीय दायित्व है। हम छोटे गृहस्थ बन गये थे—जेल में रहने वाला गृहस्थ बन गये थे। केवल मैं, मेरा-इसी की उन्नति में लगे थे। बाकी सब भूल गये थे। इसे समाप्त करना चाहिए। रामकृष्ण-विवेकानन्द साहित्य पढ़ने से हम देखेंगे कि मंदिर में पूजा करना और गरीबों की सेवा करना दोनों बराबर है।

आप तो मंदिर में भी पूजा नहीं करते। चार आने देकर पुजारी से पूजा करवाते हैं। बस हमारा काम हो गया। यही हमारा धर्म हो गया। ८०० वर्षों से यह प्रवृति चली आ रही है। इसी से हमारा पतन हुआ। रोज-रोज इतना नीचे गिर जाना पड़ा। अब हमलोग ऊपर जाने की कोशिश कर रहे हैं। आधुनिक भाव हममें आ रहा है। जब स्वामी विवेकानन्द ने परिव्राजक के रूप में भारत का भ्रमण किया, देश की दुरवस्था देखी तो यह प्रश्न सबसे पहले उनके मन में उठा कि हमारे ग्रन्थों में, शास्त्र-पुराणों में जिस भारत का वर्णन है, वह भारत तो अच्छा है लेकिन आधुनिक भारत कितना दयनीय है? (अभी देश परिव्राजक विवेकानन्द की शताब्दी मना रहा है, कलकत्ता से कन्याकुमारी तक का परिभ्रमण हो रहा है। यह भ्रमण-दल दिसम्बर में कन्याकुमारी पहुँचेगा।)

स्वामी विवेकानन्द ने एक सौ वर्ष पूर्व यह भ्रमण किया – यह जानने के लिए कि सारे भारत में लोगों की स्थिति कैसी है। इसके पहले किसी धार्मिक नेता या राजनीतिक नेता ने ऐसा भ्रमण नहीं किया था। स्वामीजी ने ही पहले किया। उन्होंने देखा कि लोग इतने गरीब हैं; दुःखी हैं, और ऊपर वाले लोग, ऊँचे एवं धनी लोग इन्हें नीचे दबा के रखते हैं। ऐसा है हमारा भारत। यह तो नरक के समान है। स्वामीजी ने पूछा, हमारे देश में इतने गरीब लोग क्यों हुए? हमारे दर्शन में कोई त्रुटि है या हमारे आचरण में कोई

त्रुटि है। इसी से ऐसा हुआ है। ऐसा प्रश्न और ऐसा उत्तर इस देश में हमको पहले पहल मिला—स्वामी विवेकानन्द के द्वारा। वे संन्यासी थे। उन्होंने सब कुछ छोड़ दिया था तब भी उनके हृदय के अन्दर देश-प्रेम की आग जल रही थी। देश की दशा देखकर उनकी आँखों से अश्रु विसर्जन होने लगे और वे अश्रुपूरित नेत्रों से कन्याकुमारी में ध्यान करने बैठ गये। एक ही प्रश्न था—कैसे इस देश की समस्या को ठीक करूँगा। उन्हें लगा कि हम मनुष्य के महत्व को भूल गये हैं। सारे देश में मनुष्य के महत्व को भुला दिया गया है। जो ऊपर वाले हैं वे भी भूल गये हैं और जो नीचे हैं वे भी भूल गये कि मनुष्य का महत्व है। इस देश का कैसे उद्धार होगा—यही था स्वामी विवेकानन्द के ध्यान का विषय। उन्हें उत्तर मिला कि लोगों के भीतर साहस हो और आत्म-श्रद्धा का भाव हो तभी उनका उद्धार होगा। उन्हें काम करने की कला सीखनी चाहिए, एक साथ काम करने की कला सीखनी चाहिए। हम तो हर वक्त झगड़े-झंझटों में लगे रहते हैं। गाँव हो, ग्राम पंचायत हो या नगरपालिका हो, हर जगह झगड़ा-झाँटी, झगड़ा और कुछ नहीं। अभी चालीस साल के बाद भी यही स्थिति है। हम दो आदमी एक साथ मिलकर काम नहीं कर सकते। लेकिन कोई बड़ा काम एक अकेला आदमी नहीं कर सकता। एक साथ काम करने के लिए चरित्र बल की जरूरत है। चरित्र बल हमारे पास आज नहीं है। इसीसे हमारे अंदर केवल 'मैं' है। तुम्हारा स्थान मेरे मन में नहीं है। मेरा स्थान तुम्हारे मन में नहीं है। इसी से हम एक साथ काम करना नहीं सीख सके। लेकिन अब हमें यह सीखना पड़ेगा। तभी हम अपनी आर्थिक और सामाजिक अवस्था को सुधार सकते हैं। एक साथ काम करने से विद्या का प्रसार हो जायगा, स्त्री जाति का उद्धार हो जायगा। यही कन्याकुमारी में ध्यान में बैठकर स्वामीजी ने चिंतन किया और इसी के विषय में अमेरिका से उन्होंने पत्र लिखे।

स्वामी विवेकानन्द के पत्र (पत्रावली) पढ़ने से हमारे देश के युवक युवतियों में एक उत्प्रेरणा आयेगी। ऐसी हैं स्वामी विवेकानन्द की चिट्ठियाँ! वे हमें धिक्कारते हुए कहते हैं, तुम लोग क्या करते हो? इतने लोग इस देश में अनपढ़ हैं। इनको भोजन नहीं मिलता है। ये कष्ट में हैं। तुम लोग आराम से हो! जो अपने अनपढ़ भाइयों के लिए त्याग नहीं करता वह गद्दार है। स्वामीजी के पत्र पढ़कर हमारे मन में एक आग धधकती है। उन पत्रों में अग्नि मंत्र हैं।

सो एक नया गृहस्थ धर्म, एक नयी गृहस्थ जाति की सृष्टि करने के लिए श्रीरामकृष्ण, माँ सारदा देवी और स्वामीजी आये हैं। उन्होंने अपने जीवन के माध्यम से बताया है कि कैसे सेवा भाव से काम करना है। यही है नागरिकता का भाव Citizenship का attitude. सो केवल नाम के लिए गृहस्थ और प्रबुद्ध नागरिक (Citizen) गृहस्थ दोनों अलग-अलग हैं। नाम के वास्ते गृहस्थ हम सब हैं। एक लड़का और लड़की ने शादी की और गृहस्थ हो गये। वे साधारण भाव से गृहस्थ हो गये। लेकिन वास्तविक गृहस्थ आश्रम होने से यह दायित्व बोध हममें होना चाहिए कि हमारे देश में क्यों इतनी बेकारी है, क्यों शोषण है, क्यों गरीबी है? (यहाँ खाने के बिना कुत्ता भी मर जाता है) हममें से हर व्यक्ति को सोचना चाहिए कि मुझमें कोई दोष है—(Something is wrong with me. मेरी मनोवृत्ति का, attitude का, कोई इतिहास होना चाहिए। यह attitude, यह मनोभाव तुमको स्वामीजी देते हैं।)

मैं कई वर्षों से हर साल विदेश जाता रहा हूँ। यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया सभी देशों में मैंने देखा कि कहीं ऐसी बेकारी नहीं है। कुत्ता, बिल्ली भी स्वस्थ, सबल—healthy, strong। आदमी तो स्वस्थ सबल हैं ही। जानवर भी

स्वस्थ सबल हैं। कहीं दरिद्रता नहीं, गरीबी नहीं। ऐसा कैसे हुआ? कोई जादू नहीं है। खाली काम, खाली एकता का भाव। काम करके उन लोगों ने ऐसा बनाया। यहाँ भी ऐसा बनाना चाहिए। हमें अपना चरित्रबल बनाना चाहिए। एक साथ काम करने से जो ताकत होती है वह एक शक्ति हममें नहीं है। व्यक्तिगत भाव से हम अच्छे हैं परन्तु दो आदमी के साथ काम करने की ताकत हमारे पास नहीं है। इसकी बहुत जरूरत है, क्योंकि आर्थिक और सामाजिक उन्नति हम अकेले नहीं कर सकते, सब के साथ मिलकर कर सकते हैं। इसी से संस्कृत में उसे अभिवृद्धि कहा गया है। 'अभि' याने सबके साथ। अभ्युदय सबके साथ अब से उदय। अतः हमलोग ऐसे गृहस्थ बने जिनमें citizenship awareness प्रबुद्ध नागरिकता का बोध हो। ऐसे गृहस्थों से ही हर गाँव उच्च श्रेणी का गाँव हो जायगा जहाँ सफाई होगी, बिजली होगी, शिक्षा होगी, सड़कें होंगी। एक साथ काम करने से बहुत कुछ हो सकता है।

लेकिन हम एक साथ काम नहीं कर सकते। हम मुकदमें में बहुत लिप्त हैं। मैंने किसी दूसरे देश में इतनी मुकदमेबाजी कभी नहीं देखी है। हम आपस में बैठकर बातचीत के द्वारा कोई फैसला नहीं कर सकते। एक ईश्वर मंदिर में है, उधर विश्वास है, किन्तु हमें मनुष्य पर कोई विश्वास नहीं है। विवेकानन्दजी ने कहा था, तुमने हजारों हजार देवी-देवताओं की पूजा की है लेकिन मनुष्य में विश्वास नहीं किया। इसीसे तुम्हारा पतन हो गया।

स्वामी विवेकानन्द ने मद्रास के अपने प्रसिद्ध भाषण 'भारत का भविष्य" विषय पर बोलते हुए कहा था, 'अपने आप पर अगाध, अटूट विश्वास रखो। तुम सभी अपने आप पर विश्वास रखो। तभी तुम सारे भारतवर्ष को पुनरुज्जीवित कर सकोगे।' वे यह भी कहते हैं कि पहले अपने ऊपर विश्वास रखो फिर बाद में ईश्वर में श्रद्धा रखो। मनुष्य में श्रद्धा रखो। ऐसी श्रद्धा से सब कुछ हो जायगा। सो ऐसे गृहस्थ होने की आज जरूरत है।

हमारे संविधान के अनुसार १८ वर्ष का युवक मतदान कर सकेगा। वह सर्वोच्च नागरिक हो गया। किन्तु सिर्फ नाम के वास्ते नागरिक हुआ उसमें चरित्रगत विकास नहीं हुआ, सामाजिक दायित्व नहीं आया। केवल स्वाधीनता, स्वाधीनता स्वाधीनता। मुझे स्वाधीनता चाहिए। - मैं एक बार हरियाणा के सोनेपत कॉलेज में व्याख्यान देने गया था। वहाँ के प्रिंसिपल ने बताया कि यहाँ बहुत से लड़के लड़कियाँ दिल्ली से पढ़ने आते हैं और कोई भी टिकट नहीं खरीदता रेलवे का। बिना टिकट यात्रा करते हैं ये सब। मैंने अपने भाषण में उन छात्रों की इस बात के लिए बड़ी भर्त्सना की। मैंने उनसे कहा, यह सब तुम लोग क्या करते हो? अपने देश की रेलगाड़ी में बिना भाड़ा के यात्रा करते हो। क्या यही नागरिकता है? तुम्हें अपने ऊपर ग्लानि नहीं होती? ऐसी भर्त्सना की तो प्रिंसिपल बोला, ऐसा किसी ने नहीं कहा। हम लोग अगर ऐसा कहेंगे तो वे हमें पीटेंगे। आपने कहा, यह अच्छा किया। अब हम भी कहेंगे।

भारत में अच्छे आदमी हो जायँ, Self respecting people, not beggars—आत्मगौरव से पूर्ण, भिखारी नहीं तो देश का कल्याण होगा। हमारे पास नागरिकता-बोध बिल्कुल नहीं है। मैं इस विषय पर हर जगह बारबार बोलता हूँ। जब केदार पाण्डेय मुख्यमंत्री थे तब मैंने पटना सचिवालय में कर्मचारियों के बीच भाषण दिया था और कहा था—देखो, इस समय तुम एक किरानी हो। किरानी कहने से साधारण आदमी लगते हो। लेकिन तुम ऐसा महसूस करो कि तुम भारत के नागरिक हो, किरानी का काम करते हो। वह केवल काम है, तुम्हारा स्वरूप एक नागरिक का है। ऐसी मनोवृत्ति पैदा करो तो तुम्हारा स्थान

ऊँचा हो जायगा। एक गाँव में एक छोटा सा स्कूल मास्टर है प्राइमरी स्कूल में। वह कहता है, मैं तो एक छोटा स्कूल मास्टर हूँ। कारण यह है कि वह अपना वास्तविक स्वरूप नहीं जानता है। उसे सोचना चाहिए कि मैं भारत का नागरिक हूँ। इस नागरिक के रूप में मैं यह काम करता हूँ। इस तरह काम करने से उन्नति होती है। यह चिंतन सारे देश में होना चाहिए कि मैं भारत का नागरिक हूँ, मेरे कंधे पर समस्त भारत की समस्याएँ हैं। मैं भली भाँति अपने दायित्वों का निर्वाह करने की कोशिश करूँगा। ऐसा दृढ़ विश्वास जब हर आदमी का हो जायगा तब एक क्रान्तिकारी परिवर्तन देश में हो जायगा। आजकल की जो यह भावना है कि मैं एक छोटा गृहस्थ हूँ, संसारी हूँ, यह भावना निकल जायगी और यह भाव भर जायगा कि मैं भारत का नागरिक हूँ, मुझे इसका गर्व है।

(६) भारत के दो रूप :

यह भारत क्या है? हजारों वर्षों से यह जीवित चला आ रहा है। इतनी लम्बी और शक्तिशाली विरासत है इस देश की। अभी भी विदेशों में भारत के ऊपर बड़ी श्रद्धा है। भारत के दो रूप हैं। एक है अमर भारत। अमर भारत को सारी दुनिया श्रद्धा और सम्मान की दृष्टि से देखती है। और एक है रोगी भारत—The sick India। आज का जो भारत है वह भ्रष्टाचार, हिंसा, लूट-खसोट, मुकदमेबाजी, ईर्ष्या-द्वेष की बुराइयों से भरा भारत है। संसद और विधान सभाओं में भी रुग्ण भारत की छवि दिखाई पड़ती है। अमर भारत—वेद वेदान्त के ज्ञान से भरा भारत। इसका सारी दुनिया सम्मान करती है। मैं हर वर्ष विदेशों की यात्रा करता हूँ। भारत का एक भी पैसा नहीं खर्च करता। दूसरे देशों के लोग खर्च करते हैं मुझ पर। खर्च देकर मुझे ले जाते हैं और सुनना चाहते हैं—वेदान्त के विषय में सुनना चाहते हैं, रामकृष्ण-विवेकानन्द के विषय में सुनना चाहते हैं। हॉलैण्ड, जर्मन, रसिया, चेकोस्लोवाकिया इन सब देशों की सरकार ने मुझे अतिथि के रूप में बुलाया है। इन सब देशों में अमर भारत के प्रति अपार श्रद्धा है क्योंकि वे जानते हैं कि उन्हें अमर भारत से कुछ मिलना है। लेकिन आधुनिक भारत रोगी भारत है—रोगों से भरा हुआ, बुराइयों से भरा हुआ—full of sickness and full of evils और भिखमंगी। १५ वर्ष पहले हम सारी दुनिया में भिखारी होकर जाते थे—कुछ दो, aid (सहायता) दो। मैं न्यूजीलैण्ड में अपने राजदूत के घर ठहरा था। उनकी लड़की स्कूल में पढ़ती थी। उसने बताया कि उस स्कूल के प्रिंसिपल ने एक दिन एक लड़की को दिखा कर कहा, तुम क्यों ऐसी छींट की शर्ट पहनती हो? इसे इंदिरा गाँधी को भेज दो। भारत के गरीबों के काम आयगी। उस राजदूत की लड़की ने मुझ कहा कि यह सुनकर मुझे बहुत लज्जा हुई कि हम इतने नीचे हैं। We are fit for only begging all over the world. That attitude is extremely bad. (हम सारे संसार में भीख माँगने के ही उपयुक्त हैं। यह मनोवृत्ति बहुत बुरी है।)

मैंने दिल्ली आकर दूरदर्शन पर एक इंटरव्यु दिया। उसमें इस घटना की चर्चा की। बताया कि सारे जगत् में भारत का स्थान एक भिखारी का है। इससे मुझे लज्जा होती है। अतः हमें रोगी भारत को अमर भारत की ओर शीघ्र ले जाने की कोशिश करनी चाहिए। हमारे देश में जो चरित्र का इतना पतन हुआ है, वह चिंतनीय है। कहीं सहयोग नहीं, हर जगह झगड़े झंझट। कोई स्कूल अच्छी तरह नहीं चलता। कई शिक्षक स्कूल नहीं जाते। एक प्रांत में मैं गया। वहाँ मुझसे एक सज्जन ने कहा, 'स्वामीजी यहाँ के शिक्षक का वेतन ८०० रुपया प्रतिमाह है। वह २०० रुपया देकर दूसरे आदमी को अपनी जगह पढ़ाने भेज देता है। खुद नहीं आता। ६०० रुपया खुद मार लेता है। ऐसा मैंने दुनिया

में कहीं नहीं देखा। जो बुराई अभी हमारे देश में है, वह दुनिया के किसी देश में नहीं है।

आजादी के पहले भारत में काफी अच्छे लोग, विशाल भाव के लोग थे। इन दिनों छोटे आदमी हैं। मैं अक्सर कहता हूँ We ars small people of a big and great country. (हम लोग बड़े और महान देश के छोटे और बौने लोग हैं।) हमें इसे सुधारना चाहिए। कभी यह देश महान् था। यहाँ कई विदेशी आये और सुन्दर भाव यहाँ से ले गये। India is a motherland of ideas—भारत महत्तम विचारों और भावों का देश है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा उदार बनो—उदारता ही जीवन है, संकोच ही मृत्यु है। आज हम मृत्यु की ओर चल रहे हैं। अतः संकुचित भाव छोड़कर तुम सब विशाल, उदार होने की कोशिश करो। हर क्षेत्र में विशाल भाव रखो; छोटे, संकुचित भाव को छोड़ दो। लघु भारत का भाव छोड़कर विशाल, महान् भारत का भाव अपने मन में ले आओ। विवेकानन्दजी के भाषणों में ये सब भाव मिलते हैं। वे कहते हैं हमारे सारे धर्मों में केवल रिचुअल—अनुष्ठान, अनुष्ठान, अनुष्ठान रह गया है। नब्बे प्रतिशत अनुष्ठान और कुछ नहीं। वह भी स्वयं नहीं कर किसी पंडित या पुरोहित से कराते हैं। हम उसे केवल आठ आने या एक रुपया दे देते हैं। ऐसा हमारा धार्मिक भाव हो गया है। श्रीरामकृष्ण कहते हैं—धर्म जीवन में उन्नति का नाम है। यह एक आन्तरिक विराम है। उसे पाने की—आध्यात्मिक विकास करने की कोशिश करो।

एक छोटा बच्चा जन्म के समय सात या आठ पाउण्ड का रहता है। बाद में बीस पाउण्ड, एक सौ पाउण्ड का हो जाता है। यह है शारीरिक विकास। ऐसा ही मन का विकास होता है। स्कूल जाने के समय मन छोटा था, धीरे-धीरे विकास होता है। ज्ञान-विज्ञान प्राप्त होता है। उसी तरह धर्म में भी है। रोज मंदिर गये और पहले जैसे रह गये तो यह धर्म नहीं है। इसी से विवेकानन्द कहते हैं—आत्म विकास, आध्यात्मिक विकास करो। मंदिर में जाओ; चुपचाप ध्यान करो, पूजा करो, फिर मंदिर से बाहर आने पर दूसरे जो आदमी हैं उन्हें भगवान समझकर उनका आदर करो। उनके अन्दर भी भगवान है, ऐसा अनुभव करो। यह आध्यात्मिक विकास है। स्वामीजी के भाषण में ये सब महान विचार, शक्तिदायी विचार हमें सबल शब्दों में मिलते हैं। रोमा रोला ने कहा था, स्वामी विवेकानन्द के शब्दों से बिजली के आघात जैसा लगता है। यह आघात हमें लगे तो भारतीय वास्तविक नागरिक बन जाएँगे।

यहाँ ८० करोड़ लोग हैं अपने देश में। लेकिन हम लोग काम करने में दुर्बल हैं। जर्मनी और हालैण्ड की तुलना में हम कमजोर श्रमिक हैं। हम लोग केवल बातों में अपनी ऊर्जा खत्म करते हैं। हम एक वाचाल देश हैं, हर जगह केवल बातें, बातें, बातें। संसद में, विधान सभा में, सड़कों पर हर जगह गप्पें हाँकना, लम्बी-लम्बी बातें करना। स्वामीजी कहते हैं—Talk less, feel more, act more - बातें कम करो, अनुभव ज्यादा करो, कार्य अधिक करो। संसार के किसी देश के लोग भारतीयों के इतना नहीं बोलते हैं। कारखानों में, दफ्तरों में, काम के समय बातचीत नहीं करते हैं। इससे ऊर्जा बचती है। हम हर वक्त बातचीत करते हैं। अतः हमें मंदिर में चुपचाप ध्यान करना चाहिए, और कारखानों तथा दफ्तरों में चुपचाप काम करना चाहिए। इससे जो ऊर्जा बचेगी उससे ज्यादा अनुभव करने की शक्ति आयेगी। ये सब बातें हमें रामकृष्ण-विवेकानन्द से मिलेगी। विवेकानन्द साहित्य १० खण्डों में है। अंग्रेजी में ८ खण्डों में। इनमें शक्ति के व्याख्यान है। हम अपने मन को कैसे आधुनिक बना सकते हैं, यह इन व्याख्यानों को पढ़ने से जानेंगे। स्वामीजी अधुनिक

थे। इसी से उनमें पूरब और पश्चिम का समन्वय हो गया था। दोनों की संस्कृति का उनमें मिलन हुआ था। आज हमें पाश्चात्य देशों की शक्ति और भारतीय संस्कृति दोनों को मिलाकर ग्रहण करने की जरूरत है। स्वामी विवेकानन्दजी का वेदान्त देश के लिए उपयोगी है। देश का विकास श्रीरामकृष्ण, विवेकानन्द और माँ सारदा देवी की राह पर चलकर ही हो सकता है।

बिहार में कभी बहुत अधिक संन्यासी थे। बहुत अधिक संन्यासी इस राज्य को चला रहे थे। स्वामी विवेकानन्द का कथन है कि कुछ ही संन्यासी रहें और बाकी सब सबल, सुदृढ़ गृहस्थ रहें, सहयोग के भाव से पूर्ण, पड़ोसियों की मदद करने के भाव से पूर्ण गृहस्थ रहें। तभी देश का मंगल होगा। अतः मैं आप से कहना चाहता हूँ कि आप सब स्वामीजी के बताये आदर्शों के अनुसार सद्-गृहस्थ बनें—राष्ट्र के मंगल के लिए अपने आप को उत्सर्ग करने वाले तथा धर्म के लिए जीवन अर्पित करनेवाले गृहस्थ बनें।

विवेक शिखा–स्थायी कोष के दाता

११.	श्री रामलायक सिंह	—	सम्होता (छपरा)	२५ रुपये
१२.	डा० एस पी० भार्गव	—	अजमेर	१०० रुपये
१३.	श्री राम छविला सिंह	—	मुजफ्फरपुर	२५ रुपये
१४.	श्री निखिल शिवहरे	—	दमोह (म० प्र०)	१५१ रुपये
१५.	श्रीमती उषारानी कर्ण	—	सुरसंड, (सीतामढ़ी)	१०० रुपये
१६.	श्री पी० सी० सरकार	—	नरेन्द्रपुर (प० बं०)	१०० रुपये
१७.	श्रीमती मीरा मित्रा	—	इलाहाबाद	२०१ रुपये
१८.	श्री गोपाल शं० तायवाडे	—	अमरावती (महाराष्ट्र)	१०० रुपये
१९.	श्री महादेव शि० गुंडावार	—	भद्रावती (महाराष्ट्र)	५० रुपये
२०.	श्री राजीव कुमार राज	—	सैदपुर, पटना-४	३१ रुपये
२१.	श्री राज सिंह	—	गाजियाबाद (उ० प्र०)	५० रुपये
२२.	श्री चन्द्र मोहन	—	टुण्डला (उ० प्र०)	९८५ रुपये
२३.	श्री के० अनूप	—	अरुणाचल प्रदेश	२० रुपये
२४.	श्री शतदल साधु खान	—	सोनारपुर(पश्चिम बंगाल)	१०० रुपये
२५.	श्री ए० जी० डगांवकर	—	यवतमाल	५१ रुपये
२६.	श्रीमती उषा गुप्ता	—	रायपुर (म० प्र०)	२०० रुपये

निवेदन – १ स्थायी कोष के लिए दान सम्पादकीय पते पर भेजने की कृपा करें।
२. चेक या ड्राफ्ट "विवेक शिखा" के नाम से भेजें।

मां दुर्गा : साक्षात् ब्रह्मस्वरूपिणी

—डॉ० आसिफ रोहतासवी

आदि शक्ति महादेवी भगवती श्री दुर्गा साक्षात् ब्रह्मस्वरूपिणी हैं। देवताओं ने जब उनसे पूछा कि आप कौन हैं, तो देवी ने कहा—"अहं ब्रह्मस्वरूपिणी। मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत्।" अर्थात् मुझसे ही प्रकृति-पुरुषात्मक जगत् उत्पन्न होता है।

यही निर्गुणस्वरूपा देवी जीवों पर दया करके स्वयं ही सगुण-भाव को प्राप्त होकर ब्रह्मा, विष्णु और महेश-रूप से उत्पत्ति, पालन और संहारकर्त्ता करती है। स्वयं भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं—

'त्वमेव सर्वजननी मूलप्रकृतिरीश्वरी।
त्वमेवाद्या सृष्टिविधौ स्वेच्छया
त्रिगुणात्मिका॥
सर्वबीजस्वरूपा च सर्वपूज्य निराश्रया।
सर्वज्ञा सर्वतोभद्रा सर्वमंगलमङ्गला॥
(ब्रह्मवैवर्त पुराण, प्रकृति, २/६६/७-१०)

'ब्रह्मवृचोपनिषद्' में इन्हीं को पराशक्ति कहा गया है'—

तस्या एवं ब्रह्मा अजीजनत्।
विष्णुरजीजनत्। रुद्रोऽजीजनत्। सर्वे
मरुद्गणा अजीजनत्। गंधर्वाप्सरसः किन्नरा
वादित्रवादिनः समन्तादजीजनत्।
भोज्यमजीजनत्। सर्वमजीजनत्। सर्वं
शाक्तमजीजनत्। अण्डजं स्वेदजमुद्भिजं
जरायुजं यत्किंचत्प्राणिस्थावरजंगमं
मनुष्यमजीजनत् सैषा पराशक्तिः।' अर्थात उस पराशक्ति से ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र उत्पन्न हुए। उसी से सब मरुद्गण, गंधर्व, अप्सराएँ और बाजा बजाने वाले किन्नर सब ओर से उत्पन्न हुए। समस्त भोज्य पदार्थ और अण्डज, स्वेदज, उद्भिज, जरायुज जो कुछ भी स्थावर, जंगम, मनुष्यादि प्रणिमात्र हैं, सब उसी पराशक्ति से उत्पन्न हुए।'

'इसी तत्व को ऋग्वेद के देवीसूक्त (१०/१२५/१)' में अम्भृण ऋषि की वाङ्नाम्नी कन्या के मुख से स्वयं पराम्बा प्रकट करती है—

'ॐ अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि।
अह मादित्यैरुत विश्वदेवैः।
अहं मित्रावरुणावुभौ विभर्म्यह
मिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ॥

मैं एकादश रुद्र रूप से विचरण करती हूँ, मैं ही सब वसुओं के रूप में अवस्थान करती हूं, मैं ही विष्णु आदि द्वादश आदित्य होकर विचरण करती हुं, मैं ही आत्मा के रूप में अवस्थान करके मित्र और वरुण को धारण करती हूं, मैं ही इन्द्र एवं अग्नि को धारण करती हूं। मैंने ही दोनों अश्विनीकुमारों को धारण कर रखा है।' ऋग्वेद के देवीसूक्त में ही वे कहती हैं—मैं ही निखिल ब्रह्मांड की ईश्वरी हूँ, उपासकों को धनादि इष्टफल देती हूँ। मैं सर्वदा सबको ईक्षण करती हूँ, उपास्य देवताओं में मैं ही प्रधान हूँ, मैं ही सर्वत्र सब जीवदेह में विराजमान हूँ, अनन्त ब्रह्माण्डवासी देवतागण जहां कहीं रहकर जो कुछ करते हैं, वे सब मेरी ही अराधना करते हैं।'

इसी विस्तार-वर्णन को 'सप्तशती' में 'एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा' तथा—'यस्यां परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता' ऐसा कहकर अपने विराट स्वरूप के प्रभाव को जगदम्बा ने प्रकट किया। वास्तव में वह सबसे बड़ी महाविद्यारूप, सबसे बड़ी मायारूप, सर्वोत्तम मेधारूप, सबसे अधिक शक्तिशाली, सत्यरुपिणी, शिवा, सुन्दरी एवं दिव्यारूपा हैं। वह 'निःशेषदेवगणशक्ति समूहमूर्त्या' हैं। वह महाविद्यारूप से जीव को ब्रह्मज्ञान प्राप्त कराकर मोक्ष प्रदान करती हैं और वही अविद्या-

रूप से उसको सांसारिक बंधनों में फंसाती है। अनन्त ब्रह्माण्डों की आधारभूत सनातनी वह अव्याकृता, परमा एवं आद्या प्रकृति है। प्रकृति, माया, शक्ति—सब पर्यायवाची शब्द हैं। वस्त्र, सूत, बिनौला, रुई, कपास में व्याप्त एक ही तत्व के समान विष्णु, शिव, गणपति, सूर्य, शक्ति, महामाया, दुर्गा, गौरी, प्रकृति के भिन्न-भिन्न नाम होते हुए भी तत्वतः एक ही हैं। जो चेतनात्मा देवताओं की दिव्य शक्तियों में देवता कहलाता है, वही देवी की दिव्य मूर्तियों में देवी कहलाता है। इसमें भेद-भाव का भान अज्ञान का सूचक है। वह चेतनात्मा अदृष्ट और निर्लिप्त है। जो कुछ करती है, उसकी पराशक्ति प्रकृति ही करती है। स्वयं परमेश्वर भी इस सत्य को स्वीकार करते हैं—

'ईश्वरोऽहं महादेवि केवलं शक्तियोगतः।'
'शक्तिं बिना महेशानि सदाहं शवरूपकः॥'
'शक्ति युक्तो यदा देवि शिवोऽहं सर्वकामदः॥

अर्थात 'हे महादेवि! केवल शक्ति के योग से ही मैं ईश्वर हूँ। शक्ति के बिना मैं शवरूप हूँ। जब शक्तियुक्त होता हूँ, तब ही सर्वकामप्रद कल्याणकारी शिव मैं होता हूँ।

सृष्टिक्रम में आद्य एवं प्रधान (प्रकृष्टा) देवी होने के कारण ही इसे प्रकृति कहते हैं। यह त्रिगुणात्मिका है, 'सत्वं रजस्तमस्त्रीणि विज्ञेयाः प्रकृतेर्गुणाः'—ऐसा शास्त्रों में लिखा है। 'प्रकृति' शब्द के 'प्र, कृ, ति'—ये तीनों अक्षर क्रमशः सत्व, रज और तम—इन तीन गुणों के द्योतक हैं। तद्गुणानुसार वह परिणामस्वरूपा हैं। दुर्ज्ञेया होने के कारण दुर्गा—प्रकृति को दुर्गा कहते हैं। 'दुर्गा' शब्द में 'दु' अक्षर दुःख, दुर्भिक्ष, दुर्व्यवसन, दारिद्रय आदि का नाशवाचक है, रेफ रोगघ्न है, गकार पापघ्न और आकार अधर्म, अन्याय, अनैक्य, आलस्यादि अनेक असुरों का नाशकर्त्ता है। सर्वसम्पत्स्वरूपा प्रकृति लक्ष्मी कहलाती हैं; वाक्, बुद्धि, विद्या, ज्ञानरूपिणी प्रकृति सरस्वती कहलाती हैं। इसी प्रकार सावित्री, राधा, सीता, तुलसी, मनसा, षष्ठी, काली, तारा, बाला, अन्नपूर्णा, गौरी, छिन्नमस्ता इत्यादि सभी स्वगुण-प्रधानांशरूपानुसार नाम धारण करती हैं।

श्री ब्रह्मवैवर्तपुराण के कृष्णजन्मखंड के ५० वें अध्याय में श्रीमन्नारायण महर्षि नारद से कहते हैं—

जगन्माता च प्रकृतिः पुरुषश्च जगत्पिता।
गरीयसीति जगतां माता शतगुणैः पितुः॥

'जगत्-जननी प्रकृति है और जगत् का पिता पुरुष। जगत् में पिता से सौगुणा अधिक महत्व माता का है।

अतः विश्व के सृष्टि-क्रम में स्त्रीरूप माया या प्रकृति की सर्वव्यापकता एवं प्रधानता है। उसका ईश्वर तक पर पूर्णाधिकार है। ईश्वरी, प्रकृति या ऐश्वर्यशक्ति के कारण ही हम ईश्वर को ईश्वर कहते हैं। नाम भिन्न है, तत्व एक है। प्रकृति ईश्वर है और ईश्वर पराशक्ति प्रकृति है। ईश्वर की मातृ-भाव से उपासना करने से देवी शक्ति रूप में शक्तिभावापन्न भक्तों के कष्टों का निवारण करते हुए उसे अपने में मिलाकर मुक्त कर देती हैं।

भगवती ने 'वाक्सूक्त' में यह बतलाया है कि 'मेरा आश्रय ब्रह्म है—'मम योनिः ..... समुद्रे।' इससे प्रतीत होता है कि आश्रय एक तत्व हुआ और आश्रयी दूसरा। इस तरह परब्रह्म और उसकी शक्ति दोनों पृथक-पृथक दो तत्व प्रतीत होते हैं। किन्तु वास्तविकता ठीक इससे विपरीत है। यदि पराम्बा अपने को आश्रित न बतलातीं, स्वतंत्र बतलातीं, तभी द्वैत की आपत्ति आती। ब्रह्म को अपना आश्रय बतलाकर उन्होंने व्यक्त कर दिया है कि मुझमें और परब्रह्म में कोई भेद नहीं होता। अग्नि की दाहिका और प्रकाशिका शक्तियां अग्नि को छोड़कर नहीं रह सकतीं।

जैन धर्म में शक्ति-उपासना

—जे० लाल मोहर उपाध्याय

जैन धर्म के अन्तर्गत शक्ति-उपासना की परम्परा तीर्थंकरों की माताओं, शासन देवियों और विद्या देवियों के रूप में तो इसके उद्भव काल से ही चली आ रही है। इतना ही नहीं जैन साहित्य में शक्ति पूजा का भी पूर्ण रूप से उल्लेख हुआ है। श्री भद्रबाहु स्वामी उपश्च गहर स्तोत्र (उपसर्ग हर स्तोत्र) की कृति से यह पूर्ण रूप से ज्ञात होता है कि देवी पद्मावती और उनके पति धरणेन्दु की सहायता से श्री भद्रबाहु स्वामी का संघ एक व्यन्तर यक्षादि के घोर उपसर्ग से बच सका था।

देवियों की अराधना एवं स्तुति में रचित जैन स्तोत्र की रचना भी विपुल परिणाम में हुई है। जैन आराध्य देवियों को हम दो भागों में बांट सकते हैं:—(क) अल्प चर्चित देवियां (ख) बहुचर्चित देवियां। अल्प चर्चित देवियों में तीर्थंकरों की माताएं, विद्या देवियों, दिक्कुमारिकाएं, लक्ष्मी आदि हैं।

अल्प चर्चित देवियों में सोलह विद्या देवियां हैं—रोहिणी, प्रज्ञप्ति, वज्र शृंखला, वज्राकण, अप्रति, चन्देश्वरी, पुष्पदन्ता, काली, महाकाली, गौरी गांधारी, सर्वास्त्र महालक्ष्मी। विद्या देवियों के अलावा छह दिक्कुमारिकाएं भी हैं—श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि और लक्ष्मी।

बहुचर्चित जैन आराध्य देवियों को हम तीन भागों में बांट सकते हैं शासन देवियां या शासन सुन्दरियां, सरस्वती प्रबोधित और दीक्षित देवियां।

जैन धर्म के चौबीस तीर्थंकरों को चौबीस शासन देवियां मानी गयी हैं। ये हैं—चक्रेश्वरी, रोहिणी, प्रज्ञाप्ति, वज्र शृंखला, वज्रांकुश, अप्रति चक्रेश्वरी, पुरुषदत्ता, ज्वाला मालिनी, मनोवेगा महाकाली, गौरी, गान्धारी वेरोड़ी, सीलसा, अनन्तमाती मानसी, महामानसी, जया, विजया, अपराजिता, बहुरूपिणी अम्बिका, पद्मावती, सिद्धाथजी।

उपर्युक्त जैन धर्म में वर्णित शासन देवियों से संबंधित कुछ जैन धर्म तीर्थंकरों की चर्चा करना अपरिहार्य है। देवी अम्बिका जैन धर्म के बाइसवें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ की शासन देवी के रूप में प्रसिद्ध हैं। उनका निवास स्थान रिवार पर्वत बताया गया है। इतना ही नहीं मूर्तिकारों ने अम्बिका देवि की मूर्ति भावना भी उत्कीर्ण कर दी है। उस देवी के हाथों में आम्र की डाली और पारा है, द्वयाक्षों में अंकुश और पद्म है। वैसे उस देवी के हाथों के बारे में जैन धर्म के श्वेताम्बर एवं दिगम्बर सम्प्रदाय के बीच मतभेद पाया जाता है।

देवी पद्मावती जैन धर्म में तेइसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की शासन देवी मानी जाती है। नव विमल सूरि ने अपने सरवेश्वर पार्श्वनाथ स्तवन में पद्मावती देवी को सरस्वती, दुर्गा, तारा, शक्ति आदिलक्ष्मी, काली, त्रिपुट सुन्दरी, भैरवी, अम्बिका और कुंडलिनी कहकर पुकारा है। आज भी पद्मावती भारत के अनेक प्राचीन जैन धर्म मंदिरों में विद्यमान है। देवि चक्रेश्वरी भगवान ऋषभ देव की शासन देवी कही गयी है। इनके दस हाथ और चार मुंह बताये गये हैं। इनका वाहन गरुड़ है। देवी ज्वाला मालिनी जैन धर्म के आठवें तीर्थंकर भगवान चन्द्रप्रभु स्वामी की शासन देवी कही गयी है। इनके आठ हाथ बनाये गये हैं जिनमें क्रमशः

त्रिशूल, पार्श, वृषि, दण्ड कापु, फल बरद और चक्र आदि हैं।

जैन धर्म में सरस्वती की चतुर्भुज मूर्त्तियाँ देखने को मिलती हैं। इस मूर्ति के चारों हाथों में एक हाथ में कमल रहता है, दूसरा हाथ अभय मुद्रा में उठा रहता है, तीसरे हाथ में पुस्तिका और चौथे हाथ में माला है, देवी का वाहन हंस है।

इतना ही नहीं श्री मल्लिषणा सूरि विजय कीर्ति, अरदास, धर्मदास, धर्म सिंह, पल्लय आदि विभिन्न कालों के प्रसिद्ध आचार्यों और विद्वानों ने समय-समय पर प्राकृत एवं संस्कृत में सरस्वती कल्प आदि की रचना प्रस्तुत की है। सच्चिया माता और गुरुकुलया नामक देवी भी जैन धर्मावलम्बियों की आराध्या हैं। इनकी कृपा से केवल्या प्राप्त होता है।

इतना ही नहीं उपर्युक्त वर्णित एवं सांकेतिक शक्ति रूप देवियों की सिद्धि के लिए मंत्र, जाप, स्तोत्र पाठ आदि का विधान भी जैन धर्म में पर्याप्त रूप से आज भी प्रचलित है जो शक्ति-उपासना की प्रतीक है।

(हिन्दुस्तान : पटना से साभार)

श्रीरामकृष्ण की अन्त्य लीला

—स्वामी प्रभानन्द
सहायक सचिव, रामकृष्ण मठ एवं मिशन
अनुवादिका—डा० नन्दिता भार्गव

(२०)

आज आश्विन की कृष्णा तृतीया है, सोमवार, २६ अक्टूबर १९८५। दिन के दस बजे के लगभग मास्टर महाशय श्रीरामकृष्ण के रोग का संवाद लेकर डाक्टर सरकार के घर जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर महाशय को बताया कि बीमारी बहुत कुछ अच्छी सी हो गयी है, इस समय तबीयत खूब अच्छी है।

मास्टर महाशय डाक्टर सरकार के घर आये। बातचीत होने लगी। डाक्टर सरकार ने कहा कि श्रीरामकृष्ण मण्डली के लोगों को एक दिन वे भोजन कराने की बात सोच रहे थे। डाक्टर सरकार के साथ गाड़ी में बैठकर मास्टर महाशय रवाना हुए। दो-चार रोगियों को देखकर श्रीरामकृष्ण को देखने जायेंगे। रास्ते में फिर मास्टर के साथ बातचीत होने लगी। डाक्टर सरकार, "देखता हूँ ये (श्रीरामकृष्ण) काली के उपासक हैं।

मास्टर महाशय, "उनका काली का अर्थ और कुछ है। वेद जिन्हें परब्रह्म कहते हैं, वे उन्हें ही काली कहते है। मुसलमान जिन्हें अल्ला कहते है, ईसाई जिन्हें गॉड (God) कहते हैं, उन्हें ही वे काली कहते हैं। वे बहुत से ईश्वर नहीं देखते हैं, एक देखते हैं। पुराने ब्रह्मज्ञानी जिन्हें ब्रह्म कह गये हैं, योगी जिन्हें, आत्मा कहते हैं, भक्त जिन्हें भगवान कहते हैं, श्रीरामकृष्ण उन्हीं को काली कहते हैं।" और भी बहुत सी बातें हुईं। अन्त में डाक्टर सरकार ने पूछा, "अच्छा उनकी बीमारी में तुम

लोग किस तरह उनकी सेवा और देख-भाल करते हो ?"

मास्टर महाशय—"जिनकी उम्र अधिक है सेवा करने का भार उन्हीं पर रहता है। किसी दिन गिरीशबाबू देखरेख करते हैं, किसी दिन राम बाबू, किसी दिन बलराम, किसी दिन सुरेश बाबू, किसी दिन नवगोपाल और दिन कालीबाबू, इस तरह।"

इस तरह बातें करते हुए, श्रीरामकृष्ण जिस मकान में रहते थे उसके सामने आकर गाड़ी खड़ी हुई। दिन के एक बजे का समय होगा। डाक्टर को देखकर हँसते हुए श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "आज बहुत अच्छी है तबीयत।" धीरे-धीरे भक्तों के साथ ईश्वरीय चर्चा होने लगी।

श्रीरामकृष्ण "सिर्फ पांडित्य से क्या लाभ, अगर उसमें विवेक और वैराग्य न हों ? ईश्वर के पादपद्मों की चिन्ता करते हुए मेरी एक ऐसी अवस्था होती है कि कमर से धोती खुल जाती है, पैरों से सिर तक न जाने क्या सरसराता हुआ चढ़ जाता है। तब सब लोग तृण के समान जान पड़ते हैं। उन पण्डितों को जिनमें विवेक, वैराग्य और ईश्वर प्रेम नहीं है, मैं घास-फूस की तरह देखता हूँ।"

श्रीरामकृष्ण ने डाक्टर रामनारायण और बंकिमचन्द्र (चटर्जी) के विषय में अपना अनुभव और राय व्यक्त की। श्रीरामकृष्ण, "बंकिम तुम लोगों के दल का एक पण्डित है। बंकिम के साथ मुलाकात हुई थी। मैंने पूछा, आदमी का कर्त्तव्य क्या है ? तब उसने कहा, आहार, निद्रा और मैथुन। इस तरह की बातें सुनकर मुझे घृणा हो गयी। मैंने कहा, "तुम्हारी ये कैसी बातें है ? तुम तो बड़े छिछड़े हो ! तुम दिन-रात जैसी चिन्ताएँ किया करते हो, वही मुख से भी निकल जाती है। मूली खाने से मूली की ही डकार आती है।" फिर बहुत सी ईश्वरीय बातें हुई।'

श्रीरामकृष्ण, "माथुर बाबू के साथ में एक जगह गया था। कितने ही पण्डित मेरे साथ विचार करने के लिए आये थे। मैं तो मूर्ख हूँ ही। उन लोगों ने मेरी वह अवस्था देखी और मेरे साथ बातचीत होने पर उन लोगों ने कहा, "महाराज ! पहले जो कुछ हमने पढ़ा है, तुम्हारे साथ बातचीत करने पर उस सारी विद्या से जी हट गया। अब समझ में आया, उनकी कृपा होने पर ज्ञान का अभाव नहीं रह जाता। मूर्ख भी विद्वान हो जाता है, मूक में भी बोलने की शक्ति आ जाती है। "इस लिए कह रहा हूँ पुस्तकें पढ़ने से ही कोई पंडित नहीं हो जाता।"

"जब मैं बच्चा था, उस समय मेरे भीतर उनका आविर्भाव हुआ था। उम्र ग्यारह साल की थी। मैदान में एक विचित्र तरह का दर्शन हुआ। सब कहते हैं, मैं उस समय बेहोश हो गया था। कोई भी अंग हिलता-डुलता न था। उसी दिन से मैं एक दूसरी तरह का हो गया। अपने भीतर एक दूसरे व्यक्ति को देखने लगा। जब श्री ठाकुर जी की पूजा करने के लिये जाता था तब हाथ बहुधा ठाकुरजी की ओर न जाकर अपनी ही ओर आता था, और मैं अपने ही सिर पर फूल चढ़ा लेता था। जो लड़का मेरे पास रहता था वह मेरे पास न आता था। कहता था, "तुम्हारे मुख पर एक न जाने कैसी ज्योति देख रहा हूँ ! तुम्हारे पास अधिक जाते भय उत्पन्न होता है।"

अब ईश्वरीय इच्छा और स्वाधीन इच्छा पर बातचीत होने लगी। श्रीरामकृष्ण, "ईश्वरीय शक्ति के निकट मनुष्य क्या कर सकता है ? कुरुक्षेत्र में अर्जुन ने कहा, 'लड़ाई मुझसे नहीं होगी, अपने भाइयों का वध मैं न कर सकूँगा। श्रीकृष्ण ने कहा, अर्जुन तुम्हें लड़ना ही होगा। तुम्हारा स्वभाव तुमसे युद्ध करायेगा। श्रीकृष्ण ने सब दिखला दिया कि ये सब आदमी मरे हुए हैं। ठाकुरबाड़ी में कुछ सिक्ख आये थे। उनके मत से

पीपल का पत्ता भी ईश्वर की इच्छा से डोलता है —बिना उनकी इच्छा के पीपल का पत्ता तक नहीं डोल सकता।"

डाक्टर साहब - यदि ईश्वर की ही सब इच्छा है तो आप बातचीत क्यों करते हैं ?" लोगों को ज्ञान देने के लिए इतनी बातें क्यों कहते हैं ?"

श्रीरामकृष्ण—"कहलवाते है, इसलिये कहता हूँ। मैं यन्त्र हूँ, वे यन्त्री हैं।"

डाक्टर साहब, "आप अपने को यन्त्र कह रहे हैं। यह ठीक है। तो चुप ही रहिए क्योंकि सब कुछ तो ईश्वर ही हैं।

इस बात पर डाक्टर सरकार और गिरीशचन्द्र बहस करते हैं। श्रीरामकृष्ण, "कर्म करने के पहले उस पर विश्वास चाहिए, उसके साथ वस्तु की याद करने पर आनन्द होता है, तभी काम करने में उस आदमी की प्रवृत्ति होती है [मिट्टी के नीचे एक घड़े में असर्फियां भरी हैं, यह ज्ञान, यह विश्वास पहले होना चाहिए। घड़े को सोचने से ही आनन्द मिलता है। फिर खोदा जाता है। खोदते हुए घड़े में कुदाल के लगने पर जब ठनकार होती है, तब आनन्द और भी बढ़ जाता है। फिर जब घड़े की कोर दीख पड़ती है तब आनन्द और बढ़ता है। इसी तरह आनन्द बढ़ता ही जाता है।" मास्टर महाशय, गिरीशचन्द्र और डाक्टर सरकार के मध्य जोरों से तर्क वाद विवाद होने लगा। डाक्टर सरकार ने अपने सिद्धान्त को रखा। डाक्टर साहब, 'मैं बिल्कुल स्वाधीन नहीं रहता। गौ खूँटी से बंधी है। रस्सी की पहुँच जहाँ तक है, वहीं तक स्वाधीन है, परन्तु जहाँ उसे रस्सी का खिचाव लगा तो—"

श्रीरामकृष्ण— (डाक्टर सरकार से)- "देखो, ईश्वर ही सब कुछ कर रहे हैं। वे यन्त्री मैं यन्त्र हूँ, अगर किसी में यह विश्वास आ जाय, तब तो वह जीवन्मुक्त हो गया।.....जब तक ईश्वर के दर्शन न हों, जब तक उस पारसमणि का स्पर्श न किया जाय, तब तक मैं कर्ता हूँ, यह भ्रम रहेगा ही, मैं सत् कार्य कर रहा हूँ, मैं असत् कर्म कर रहा हूँ, इस तरह की भूलें होंगी ही। यह भेद-बोध उन्हीं की माया है और इस मिथ्या संसार को चलाने के लिए इस माया का प्रयोजन है। किन्तु विद्यामाया का आश्रय लेने पर, सत्—मार्ग को पकड़ लेने पर लोग उन्हें प्राप्त कर सकते हैं। जो ईश्वर को प्राप्त कर लेता है, जो उनके दर्शन करता है वही माया को पार कर सकता है। वे ही एकमात्र कर्ता हैं मैं अकर्ता हूँ। यह विश्वास जिसे है, वही जीवन मुक्त है। यह बात मैंने केशव सेन से कही थी।"

इस बात को लेकर डाक्टर सरकार और गिरीश विचार-विनिमय करते रहे। थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण ने कहा, "ये (डाक्टर) जो कुछ कह रहे हैं इसका नाम है अहैतुकी भक्ति।..... (भक्तों से) इनके (डाक्टर के) मन का भाव क्या है, तुमने समझा ? वह है; ईश्वर से यह प्रार्थना कि हे ईश्वर, सत्कर्म में मेरी मति हो, असत् कार्य से बचा रहूँ।"

मेरी भी वही अवस्था थी। इसे दास्य भाव कहते हैं। मैं "माँ—माँ" कहकर इतना रोता था कि लोग खड़े हो जाते थे। मेरी इस अवस्था के बाद मुझे बिगाड़ने के लिए और मेरा पागलपन अच्छा कर देने के विचार से एक आदमी मेरे कमरे में एक वेश्या ले आया—वह सुन्दरी थी, आँखें बड़ी-बड़ी थी। मैं "माँ-माँ" कहता हुआ कमरे से निकल आया और हलधारी को पुकारकर कहा, "दादा आओ देखो तो, मेरे कमरे में कोई है।" हलधारी तथा अन्य लोगों से मैंने कह दिया। इस अवस्था में "मां—माँ" कहकर मैं रोता था और कहता था "माँ ! मुझे बचा, माँ मुझे निर्दोष कर दे, सत् को छोड़ असत् में मेरा मन न जाये।' तुम्हारा यह भाव तो अच्छा है—सच्चा भक्ति भाव है दास—भाव।[1]

(१) श्रीरामकृष्ण बचनामृत, तीसरा भाग, पचम संस्करण २१ वां परिच्छेद पृष्ठ ३७८-३९६ से लिया गया है।

भारत-परिक्रमा शताब्दी के अवसर पर

युवशक्ति-प्रवाह के भगीरथ—विवेकानन्द

—स्वामी शशांकानन्द
बेलुड़ मठ

युगाचार्य स्वामी विवेकानन्द जब परिव्राजक के रूप में भारत भ्रमण कर रहे थे, उस समय की बात है। दक्षिण भारत के महाबलेश्वरम् नामक स्थान में वे एक वकील के घर में अतिथि के रूप में टिके हुए थे। वकील साहब का एक छोटा लड़का था जो भयंकर रूप से रोया करता था। जिस रात वह रोना शुरू करता तो उस रात घर में कोई भी सो नहीं पाता था क्योंकि उसका रुदन-क्रंदन बड़ा ही भयंकर था। एक दिन स्वामी जी ने उस बच्चे के माता-पिता से कहा, "अच्छा, क्या आप लोग इस बच्चे को मुझे देंगे? आज रात में इसका तत्त्वावधान करूँगा।" बच्चे की माँ ने कहा, 'स्वामी जी! बच्चा देने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है, किन्तु आप बच्चे का रोना चिल्लाना कैसे बंद कर सकेंगे? मैं माँ होकर जब उसे चुप नहीं करा पाती तो आप कैसे कर पायेंगे? स्वामीजी ने कहा, 'ठीक है, मुझे प्रयास करने दो।' माँ के राजी होने पर स्वामी जी ने उस बच्चे को अपनी गोद में रख कर ध्यान करना शुरू किया। सारी रात उसे अपनी गोद में रखे हुए ऐसा चमत्कार दिखाया कि सारी रात में एक बार भी बच्चा नहीं रोया अपितु शान्त होकर स्वामी जी की गोदी में सोया रहा।

घटना छोटी होते हुए भी बड़ी ही महत्त्वपूर्ण और युव-समाज से सम्बन्धित है। आजका युव-समाज उसी बच्चे की तरह भौतिकवाद रूपी माता की गोद में शान्ति नहीं पा रहा है। निराशा, हताशा और जगत के खोखलेपन में बिलख बिलख कर रो रहा है। वह मानो बिखरा हुआ है। विशृंखलता, अनुशासनहीनता, हिंसा, खून-खराबी ही उसका रुदन-क्रंदन है।

भौतिकवाद उसे चुप कराने में असमर्थ है और भौतिकवाद को यह संदेह होता है कि उसे आध्यात्मिकता शान्त कर सकेगी। इस युग में युव-समाज को उस रोने वाले बच्चे की तरह स्वामी विवेकानन्द की गोदी चाहिए जहाँ वह आध्यात्मिकता की लोरियों में सोया रहे।

प्रश्न तो यह उठ सकता है कि, 'उत्तिष्ठत। जाग्रत। प्राप्यवरान्निबोधत्' की टंकार बजाने वाले विवेकानन्द की गोद में युव-समाज कैसे सो सकेगा? उसे तो उठना है, जागना है और लक्ष्य की प्राप्ति न करने तक सोना नहीं है। तो मैं पुनः कहता हूँ कि युव-समाज स्वामी विवेकानन्द की गोदी में सो जाएगा—वह सो जाएगा इस विनाशकारी, विध्वंसात्मक विशृंखल जगत में उसका यह हिंसात्मक रुदन क्रंदन थम जाएगा, वह इन्द्रियों और मन की पराधीनता से मुक्त हो कर, स्वार्थ और असंयम के जगत में सोया रहेगा। परन्तु वह जागेगा सृजनात्मक, गठनात्मक, निःस्वार्थ जगत में, वह जागेगा ज्ञान-विज्ञान के जगत में, प्रकृतिस्वरूप अन्तरात्मा के जगत में। वहाँ कोई किसी का पराया नहीं, शत्रु नहीं सभी जगत् ब्रह्ममय होगा। उसी प्रगाढ़ आनन्द निद्रा में युव-समाज शान्त और आनन्दपूर्ण हो उठेगा एवं संचार करेगा उस युव-शक्ति का जो देश-देशान्तर में शान्ति, मैत्री, प्रेम और करुणा पहुँचाएगी और ज्ञान, भक्ति और कर्म की त्रिवेणी बहा देगी। यही तो स्वामी विवेकानन्द का चमत्कार है और स्वामी जी की गोद में सोने का अर्थ है रामकृष्ण—विवेकानन्द के भाव को ग्रहण करना।

युवावस्था मानव जीवन की श्रेष्ठतम अवस्था है और मानव शक्ति की चरम सीमा है। अतः युव-शक्ति मानव-जीवन की सबसे प्रबल शक्ति है। किन्तु कोई भी शक्ति स्वयं में अच्छी या बुरी नहीं होती, शुभ या अशुभ नहीं होती। अच्छी या बुरी दिशा में परिचालित होने के कारण या उसके सदुपयोग या दुरुपयोग करने से ही शक्ति का कार्य अच्छा या बुरा होता है। अतः कोई शक्ति बुरी तब ही होती है जब उसका दुरुपयोग किया जाय।

प्रबल वेगवती युव-शक्ति बड़ी ही भयंकर हो सकती है। वेगवती नदी के प्रवाह की भाँति ही उसकी गति में बाधा देने से बाढ़ आ जाएगी और विनाश अपनी चरम सीमा पर तांडव नृत्य करने लगेगा। अतः युव-शक्ति प्रवाह का अवरोध न करके उसे यथार्थ दिशा की ओर संचालित करना ही श्रेष्ठ है क्योंकि तब वह उद्दाम वेग से आने वाला भयंकर स्रोत देवसरिता माँ जाह्नवी की भाँति ही मानव-सृजन का कार्य करेगी। आज युव शक्ति रूपी मन्दाकिनी पूत सलिला गंगा की भाँति मानव-कल्याणकारी होने के लिए राजा भगीरथ के स्थान पर स्वामी विवेकानन्द रूपी शिल्पी की आवश्यकता है जो उसके प्रवाह को यथार्थ दिशा में ले जा सके।

पुनः युव शक्ति एक बुलडोजर की भाँति है जो चलने पर निर्विचार उसके सामने जो भी वस्तु आये उसे ढकेल कर कुचलकर भूमिसात् कर देती है। किन्तु उसी बुलडोजर की सहायता से रास्ता निर्माण का कार्य, टूटे-फूटे खंडहरों को गिराने का कार्य किया जाता है। कमाल तो यंत्री का है जो बुलडोजर पर नियंत्रण रखता है। स्वामी विवेकानन्द वे यंत्री हैं जो इस बुलडोजर पर यदि नियंत्रण रखें तो उसे एक उपयोगी दिशा मिलेगी।

युव शक्ति को एक उपयुक्त दिशा मिल सके, इसी उद्देश्य से भारत सरकार ने उनके जन्मदिन को राष्ट्रीय युव-दिवस घोषित किया है ताकि भारत के युवकों और युवतियों को यह ज्ञात हो कि एक युवक या युवती के लिए स्वामी विवेकानन्द का इस पृथ्वी पर आगमन महत्त्वपूर्ण है। स्वामी विवेकानन्द का जीवन और उनकी वाणी ही युव-समाज का नेतृत्व कर सकती है, उसे ध्वंसात्मक एवं नकारात्मक, स्वार्थ एवं कामना पूर्ति के मार्ग से हटाकर प्रेम, दया, त्याग और सेवा के मार्ग पर संचालित करके विश्वकल्याण के कार्य में लगा सकती है। चारित्रिक बल और मनुष्यत्व के द्वारा भौतिक समृद्धि के साथ-साथ त्याग और सेवा का मार्ग प्रशस्त करा सकती है।

स्वामी विवेकानन्दजी की वाणी मानव-विकास का विज्ञान है, मानव संभावनाओं को अभिव्यक्त करने की प्रयुक्ति है तथा अन्तर्निहित सूक्ष्मातिसूक्ष्म दिव्यात्मा को प्रकाशित करने के लिए सर्वश्रेष्ठ अणवीक्षण यन्त्र है। इस विज्ञान, प्रयुक्ति और यंत्र की सहायता से युव-समाज अपनी बिखरी हुई शक्तियों को नष्ट न कर मानव-जीवन के उद्देश्य की पूर्ति में सफल अवश्य होगा।

स्वामी विवेकानन्द बार-बार उपनिषद् के इस श्लोक को उद्धृत करते हुए एक आदर्श युवक की कल्पना करते थे, "युवस्यात् साधु-युव, अध्यायकः, आशिष्टः, दृढ़िष्ट, बलिष्ठः। अर्थात् युवक एक अच्छा युवक हो। किन्तु केवल अच्छा होना ही यथेष्ट नहीं उसे शिक्षित भी होना चाहिए क्योंकि शिक्षा उसे गाय आदि पशुओं से श्रेष्ठ मनुष्य बुद्धि प्रदान करती है। पढ़ा-लिखा होना ही काफी नहीं है यदि वह आशावादी न हो, अपने संकल्प में दृढ़ न हो, सत्य में अडिग न हो। आत्मश्रद्धा सबसे बड़ा गुण है जो उसे सफल बना सकता है। अपने लक्ष्य पर दृढ़ता से टिके रहना ही सफलता की कुंजी है। फिर यह सब होने पर भी शारीरिक बल भी आवश्यक है। फौलाद के पुट्ठे और लोहे की पेशियाँ होनी चाहिए।

इन सब गुणों के साथ-साथ यदि अर्थोपार्जन

की क्षमता रखता हो तो सोने में सुहागा ही होगा। अतः उपनिषद् कहते हैं," तस्येयं पृथिवी सर्व वित्तस्य पूर्णस्यात्।" और यदि ये सब गुण एक युवक में उपस्थि हो जाएं तब ही वह आनन्द को प्राप्त होता है - "स एको मनुषा आनन्दः।"

इन सबके अतिरिक्त उसे आध्यात्मिक विद्या की अनुभूति भी होनी चाहिए जिससे मानव-विकाश हो, उन्नति और तृप्ति हो। अन्तर्निहित आत्मा की अनुभूति कर सके और दूसरों को भी करा सके। दूसरे प्राणियों के प्रति प्रेम, दया, क्षमा, सहनशीलता का उदय हो।

स्वामी जी युवकों को पूर्ण और दिव्य बनने का स्वप्न देखते थे ताकि वे एक अपूर्व शक्ति का संचार कर सकें।

स्वामीजी चाहते थे कि हमारे युवक पहले स्वयं अपने भीतर अन्तर्निहित मानव-संभावनाओं को, दिव्यसंभावनाओं को व्यक्त करें और दूसरों को ऐसा करने में सहायता करें। साधन है 'शिव ज्ञान से जीव-सेवा' जन साधारण में, दरिद्र, रोगी और मूर्ख पद-दलितों में नर-नारायण के दर्शन करते हुए सत्य, अहिंसा, प्रेम और सहानुभूति के मधुरे वातावरण में त्याग और सेवा के आदर्श पर युव-समाज को उसके परम लक्ष्य-मुक्ति पर अग्रसर कराना ही युव-शक्ति प्रवाह को प्रकृत दिशा दिखाना है—उद्दाम वेग से आने वाले भयंकर जल स्रोत को पुण्य सलिला जाह्नवी में रूपान्तरित करना है। स्वामी जी कहते हैं, "जब तुम्हारी जीवात्मा प्रबुद्ध होकर सक्रिय हो उठेगी, तब तुम आप ही शक्ति का अनुभव करोगे, महिमा और महत्ता पाओगे, साधुता आएगी, पवित्रता भी आप ही चली आएगी—मतलब यह है कि जो कुछ अच्छे गुण हैं, वे सभी तुम्हारे पास आ पहुँचेंगे।" "उत्तिष्ठत्! जाग्रत! प्राप्यवरान्निबोधत्!

अतः हे युवकों आत्म महिमा में प्रतिष्ठित होकर अदम्य उत्साह, पवित्रता एवं निष्काम भाव से दूसरों को आत्म महिमा में प्रतिष्ठित कराओ। (Be and Make)

यही है स्वामी जी के चमत्कार का रहस्य। उन्होंने अपने गुरुदेव श्री रामकृष्ण देव के चरणों में बैठ कर उस प्रयुक्ति को पाया था जो उन्हें पाश्चात्य विज्ञान, पाश्चात्य दर्शन, डेकार्ट के अहं-वाद ह्यूम के और बेन के नास्तिकवाद, डार्विन के विकासवाद और स्पेन्सर के अज्ञातवाद की झोली में नहीं मिल पायी थी और न ही तत्कालीन समाज सुधारक गण तथा धर्म नेता ही दे सके थे। इसी प्रयुक्ति (Technology) के द्वारा ही वे अपने अन्तर में उठती हुई युवशक्ति के प्रलयंकारी वेग को शान्त कर पाये थे और उसी के द्वारा उन्होंने अमरीका में एक अपूर्व शक्ति का विस्फोरण कर के सारी पृथ्वी को हिला डाला था। उसी प्रयुक्ति के द्वारा ही उन्होंने एक ऐसी नहर खोद डाली जिसमें भयंकर युव-शक्ति का प्रबल वेग वीणा की झंकार की भांति मधुर स्वरों को गुनगुनाते हुए देव सलिला जाह्नवी बन चुका है, बन रहा है और बनता रहेगा।

"पहले एकान्त में बैठकर धर्म-जीवन को अच्छी तरह गढ़ लेना होगा, पूर्ण रूप से त्यागी होना होगा और अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करना होगा। तुमलोगों के भीतर तमोगुण आ गया है—तो उससे क्या हुआ? उसका नाश क्या नहीं हो सकता? एक ही बार में हो सकता है। इस तमोगुण का नाश करने के लिए ही तो भगवान श्रीरामकृष्ण देव अवतरित हुए थे।" **स्वामी विवेकानन्द**

मदालसा

—स्वामी विवेकानन्द

(अमेरिका के विभिन्न स्थानों में वक्तृता देने के बाद स्वामीजी क्लांत हो गये थे। तब वे न्यूयार्क के पास एक निर्जन स्थान में एकांतवास में चले गये। वहाँ उनके पास विशेष रूप से शिक्षा लाभ करने हेतु कुछ नर-नारी भी चले आये। मदालसा की कहानी स्वामीजी ने उपदेश देते हुए कही थी। यह कहानी मार्कण्डेय पुराण में संकलित है।—सं)

प्राचीन काल में शत्रुजीत नामक एक राजा थे। उस समय अनेक ऋषि मुनि वन में तपस्या करते थे। दानव, राक्षस और असुर मुनियों के आश्रम में आ उत्पात मचाते थे। देश के राजा तब असुरों के साथ युद्ध करके, उन्हें मारकर या भगाकर आश्रमों की रक्षा करते थे। मुनि-ऋषि तब निश्चित मन से धर्म-कर्म करते थे।

शत्रुजीत जब राजा थे, तब गालब नामक एक मुनि हिमालय में आश्रम बना तपस्या करते थे। देश-विदेश में गालब प्रसिद्ध संत थे। दानवों ने एक बार गालब के आश्रम में भयंकर उत्पात मचाया। राजा शत्रुजीत ने जब यह समाचार सुना तब उन्होंने तत्काल अपने पुत्र ऋतध्वज को गालब के आश्रम की ओर प्रस्थित कर दिया।

राजकुमार ऋतध्वज दुर्द्धर्ष बीर थे। घोड़े पर सवार हो, तीर धनुर्ष हाथ में ले वे आश्रम में पहरा देने लगे। उनके भय से सारे दानव भाग गये। दानवों में पातालकेतु सबसे बीर एवं दुष्ट था। दानवों में एक मायावी क्षमता होती है। वे अपना रूप बदल कोई भी रूप धारण कर सकते हैं।

एक दिन पातालकेतु ने शूकर रूप धारण कर गालब के आश्रम में उत्पात शुरू किया। गालब तब पूजा पर बैठे थे। उस भीषणाकार शूकर को देख सारे शिष्य चीत्कार कर उठे। कुमार ऋतध्वज ने तभी एक तीर से शूकर पर वार किया। तीर जाकर शूकर के पेट में विंध गया। पेट में तीर लेकर ही वह शूकर भागने लगा। राजकुमार ऋतध्वज उसका पीछा करने लगा।

बहुत दूर जाने के बाद शूकर कहीं गायब हो गया। घोड़ा भी ऋतध्वज को ले अचानक एक बड़े गढ़े में गिर गया,-परन्तु किसी को भी चोट नहीं आयी। और भी आश्चर्य की बात, गड्ढे में एक सुन्दर रास्ता था, परंतु अंधकार था। अंधकार में ही घोड़ा उस पथ पर दौड़ पड़ा। कुछ देर बाद ही राजकुमार ने प्रकाश देखा, और देखी-एक विशाल राजपुरी।

राजकुमार एकदम हतप्रभ थे। वे जिधर देखते, गगनचुम्बी इमारतों के सिवा कुछ भी न दिखता। वे चारों ओर घूमने लगे। राजकुमार ने सोचा कि वह शूकर यहीं कहीं छिपा है। परन्तु वह शूकर और न दिखा। सामने एक बड़ा घर था। वह घर जैसा सुन्दर वैसा ही बड़ा भी था। राजकुमार ने सुना घर के भीतर से रोने की आवाज आ रही थी। राजकुमार के मन में कौतूहल हुआ। घोड़े को बाहर बांध उन्होंने घर में प्रवेश किया। भीतर जाकर देखा कि एक अत्यंत सुन्दरी राजकुमारी रो रही है।

राजकुमारी का नाम था मदालसा। वह स्वर्ग के गन्धर्वराज विश्वासुर की कन्या थी। विवाह करने के लिए पातालकेतु उसे स्वर्ग से उठा लाया था। मदालसा पातालकेतु से कतई विवाह करना नहीं चाहती थी। इसलिए उस दानव ने उसे बन्दी बनाकर रखा था एवं आनेवाले दिन को उससे विवाह करना चाहता था।

मदालसा का दुःख देखकर कुमार भी दुःखित हो उठा। उसने मदालसा से कहा, "तुम मेरे साथ चलो। मैं तुमको अपने घर ले चलूँगा।"

मदालसा राजी हो गयी। तब ऋतध्वज मदालसा को घोड़े पर बिठाकर पातालपुरी से रवाना हो गया। पातालकेतु के अनेक दानवों ने आकर ऋतध्वज पर आक्रमण किया। ऋतध्वज ने भी महापराक्रम के साथ युद्ध करना प्रारम्भ किया। कुमार के बाणों ने अनेक दानवों को मार गिराया। बाकी सब भाग गये।

फिर मदालसा को लेकर ऋतध्वज निर्विघ्न पाताल से निकल गये एवं घर की ओर घोड़े को द्रुत गति से दौड़ाने लगे। मदालसा को देख एवं इतने दिनों बाद पुत्र से मिलकर राजा एवं रानी दोनों ही अत्यन्त आनन्दित हुए। खूब धूम-धाम के साथ मदालसा एवं ऋतध्वज का विवाह हो गया। मदालसा की सुन्दरता अपूर्व थी— तीनों लोकों में उस जैसा सुन्दर कोई न था।

सभी लोगों के मुख पर एक ही बात थी—रूप एवं वीरत्व में कार्तिक जैसे राजकुमार को रूपवती लक्ष्मीस्वरूपा सरस्वती मिली है। राजा ने कामना की कि पुत्र मेरे वंश का नाम रोशन करे एवं पूर्व-पुरुषों का मुख उज्जवल करे। रानी ने पुत्र एवं पुत्र-बधू के दीर्घायु होने की कामना की।

मदालसा ने परम भक्ति से श्वसुर एवं सास की सेवा करनी शुरू की। राजकुमार परम सुख के साथ दिन बिता रहे थे। सुख के दिन हमेशा नहीं रहते। दिन के बाद रात आती है, रात के बाद दिन। राजपुरी में एक दिन संदेश आया कि फिर दानवों ने मुनियों के आश्रम में उत्पात मचाया है। सामाचार सुनकर राजा चिन्तित हो गये। ऋतध्वज को राजा ने पुनः दानवों के दमन हेतु भेजा। युद्ध का साज पहनकर राजकुमार ने माता-पिता को प्रणाम किया, मदालसा से विदाई ली, फिर घोड़े पर सवार होकर आश्रम की ओर यात्रा प्रारंभ ली। यात्रा के समय राजा ने आशीर्वाद दिया, सभी देवी देवताओं से दुआएं माँगी। फिर मदालसा ने सजल नयनों से विदाई दी।

गालब के आश्रम में ऋतध्वज के हाथों बाण-विद्ध होकर पातालकेतु ने शूकर रूप में पाताल में जाकर प्राणत्याग किया था। पातालकेतु का एक भाई था। नाम था तालकेतु। ऋतध्वज से प्रतिशोध लेने के लिए वह अनेक दिनों से चेष्टा कर रहा था। उसने मुनिवेश धारण कर यमुना के तीर पर एक आश्रम बनाया था। ऋतध्वज को आते देख तालकेतु के सारे अनुचर मुनिवेश में यमुना तट पर धर्म-कर्म में जुट गये।

राजकुमार घोड़े पर चढ़कर तीर-धनुष लेकर चारों ओर घूमने लगे। कहीं कोई दैत्य-दानव नहीं दिखा। तालकेतु ने उससे कहा, "कुमार, यहाँ दानवों ने भीषण उत्पात मचा रखा है। कितने कष्टों-यंत्रणाओं में हमारा दिन बीतता है। आपको देख सारे दानव भयभीत हो भाग गये हैं। यदि आप यहाँ से चले जायँ तो वे पुनः उत्पात मचायेंगे। इसलिए हमारी इच्छा है कि आप कुछ दिनों तक यहीं रहिए।

राजकुमार ने साफ मन से उसकी बातों पर विश्वास कर लिया। एक दिन तालकेतु ने कुमार से कहा, "बहुत दिनों से मेरी यज्ञ करने की इच्छा है। परन्तु यज्ञ के लिए दक्षिणा मैं संग्रह न कर सका हूँ। दक्षिणा के बिना यज्ञ का कोई फल नहीं होता। आप यदि अपना मुक्ताहार मुझे दें, तभी यज्ञ सम्पन्न होगा।

अति आनन्द के साथ कुमार ने अपना मुक्ताहार खोलकर तालकेतु के हाथों सौंप दिया। मुक्ताहार को हाथ में ले तालकेतु परमानन्द के साथ यमुना तट पर चले गये। राजकुमार ने सोचा कि मुनि यज्ञ करने गये हैं। इसलिए सतर्क होकर वे मुनि के आश्रम पर पहरा देने लगे।

वस्तुतः मुनि यज्ञ नहीं कर रहे थे। मायावी तालकेतु एक वृद्ध मुनि के वेश में राजा शत्रुजीत की सभा में गया। मुनि को देख राजा सिंहासन से उठ खड़े हुए और कहा, "स्वागतम् देवता, स्वागतम्।

आज मेरा परम सौभाग्य है। आइए, आसन ग्रहण कीजिए।"

मुनि ने कहा, "महाराज, महाविपदा आ गयी है। मैं वृद्ध तपस्वी हूँ, फिर भी मैं विचलित हो गया।"

मुनि की आँखें छलछलाने लगीं। उसकी बातें सुनकर राजा एवं सभी उपस्थित व्यक्तियों को विषम उत्कण्ठा होने लगी। मुनि ने कहना प्रारंभ किया, "यमुना तट पर मेरा आश्रम है। मेरे आश्रम के निकट एक दिन राजकुमार के साथ एक दानव का महायुद्ध हुआ। कुमार की वीरता वस्तुतः दर्शनीय है। परन्तु दानवों ने मिलकर कुमार को निष्प्राण कर दिया। यह देखिये वह मुक्ताहार जो कुमार की ग्रीवा की शोभा बढ़ाता था, शूद्र तपस्वियों ने नदी-तीर पर कुमार का अन्तिम संस्कार सम्पन्न किया। हाय, हाय, मुझे ही यह निष्ठुर संवाद लाना पड़ा।"

राजा ने मुक्ताहार हाथ में लेकर देखा, यह कुमार का ही हार था। मुनि ने विदाई ली। विषाद की काली छाया ने समस्त राजपुरी को आच्छन्न कर दिया। पति की मृत्यु का सामाचार सुनकर मदालसा ने शोक से प्राण त्याग दिये। राज्य में हाहाकार मच गया।

यमुना के तीर पर जब तालकेतु लौटा तो उसने देखा कि राजकुमार आश्रम के बाहर पहरा दे रहे थे। खूब आनन्दित होकर उसने कहा, 'आपकी सहायता से मेरा यज्ञ संपन्न हो गया। बहुत दिन हो गये, आप घर नहीं गये। मैं अपने दिव्य नेत्रों से देख सकता हूँ। आपके माता-पिता स्त्री सभी चिंतित हैं। अभी तो दानवों का उत्पात भी नहीं है। आप घर लौट जाइए, हम आपको अवश्य समाचार भेजेंगे।"

तालकेतु के कथनानुसार ऋतध्वज घर लौट गये। घर जाकर सारी बातों को सुनने के पश्चात् ऋतध्वज को इतना दुःख हुआ कि वे स्थिर नहीं रह सके। वे अपने कमरे में जाकर रोने लगे। वे किसी के साथ न बात करते, न किसी से मिलते, केवल मदालसा के बारे में सोचते और कभी-कभी रोते। राजकुमार कैसे थे, और कैसे हो गये।

उस समय नागराज नामक एक राजा दूसरे देश में राज्य करते थे। उसके दो पुत्र थे—दोनों ही कुमार के परम मित्र थे। ऋतध्वज को प्राणों से भी अधिक चाहते थे। मदालसा की मृत्यु कुमार का दुःख यह सब समाचार उन्हें धीरे-धीरे प्राप्त हुआ। पुत्रद्वय ने नागराज को सब कुछ बताकर कहा, "कि मदालसा के बिना कुमार जिन्दा नहीं बचेंगे।"

इससे नागराज को बहुत दुःख हुआ। उन्होंने सोचा, "जैसे भी हो, मदालसा को लाकर कुमार को देना पड़ेगा।" यह निश्चय करने के बाद वे हिमालय पर जाकर कठोर तपस्या करने लगे। तपस्या से सन्तुष्ट होकर शिव ने दर्शन दिये एवं नागराज से वर मांगने को कहा।

नागराज ने हाथ जोड़कर कहा—"यदि आप सचमुच प्रसन्न हैं तो वर दीजिए कि मदालसा मुझे कन्या रूप में प्राप्त हो जिस उम्र, जिस रूप एवं गुण को लेकर मदालसा मृत्यु को प्राप्त हुई उसी अवस्था में वह मेरे घर में जन्मग्रहण करे। पूर्वजन्म की सारी बातें भी उसे याद रहे।"

शिव ने कहा, "तथावस्तु। श्राद्ध के समय तुम श्राद्ध का एक पिण्ड खा लेना। मदालसा तुम्हारे दाहिने कान से जन्म ग्रहण करेंगी। जन्म के साथ ही वह अपने पूर्व की अवस्था एवं रूप में आ जाएगी। पूर्वजन्म की सारी बातें भी उसे याद रहेंगी।"

यह कहकर शिव अन्तर्धान हो गये। उसके बाद श्राद्ध के दिन नागराज ने शिव के कथनानुसार एक पिण्ड खा लिया। उसके बाद नागराज के

दाहिने कान से मदालसा का जन्म हुआ। जन्म के साथ ही उसने अपना पूर्व रूप, गुण सब कुछ प्राप्त कर लिया। इतना सब कुछ हो जाने पर भी नागराज ने किसी से कुछ न कहा। उन्होंने मदालसा को अन्तःपुरी में छिपा दिया एवं अपने पुत्रों से कहा कि वे अपने मित्र ऋतध्वज को यहाँ बुलाएँ।

पिता के कथनानुसार दोनों भाई ऋतध्वज के घर जाकर उपस्थित हुए। ऋतध्वज कहीं जाना नहीं चाहते थे, मित्रों के साथ भी उन्होंने अधिक बातें नहीं की। राजा और रानी ने सोचा, "यदि राजकुमार नागराज के घर जाता है, तब भला ही होगा। हो सकता है कि घूमने फिरने में वह पुनः स्वाभिमान अवस्था में वापस आ जाय।" राजा और रानी दोनों ने उसे समझाया, मित्रों ने भी बार-बार चलने को कहा। अन्ततः कुमार को राजी होना ही पड़ा।

नागराज के पुत्र ऋतध्वज को घर ले आये। नागराज ने खूब अच्छी तरह से इनका स्वागत किया। खाना पीना समाप्त होने के बाद कुमार को नागराज ने कहा, "तुम मेरे पुत्र के समान हो। बोलो, तुम्हें क्या चाहिए, कैसे मैं तुमको सन्तुष्ट कर सकता हूँ?"

ऋतध्वज ने धीरे-धीरे कहा, "महाराज, आपकी कृपा, आपका प्रेम मुझे हमेशा याद रहेगा! परन्तु धन, मान, राज्य—ऐसा कुछ भी मुझे नहीं दिखता, जिसे प्राप्त कर मैं वस्तुतः सुखी हो सकूँ।"

इतना कहकर कुमार ने करुण दृष्टि से अपने मित्रों को देखा। कुमार की अन्तःवेदना को समझकर, नागराज के पुत्रों ने पिता से कहा, -'पिताजी मदालसा को खोने के बाद, कुमार के मन में जरा भी शांति नहीं है। मदालसा को छोड़कर संसार की कोई वस्तु उसे शांति नहीं दे सकती।"

नागराज ने कहा, "एक बार जो मृत्यु को प्राप्त हो चुका है, उसे प्राप्त करना—यह स्वप्न में संभव है, या फिर आसुरी माया से।"

कुमार ने किसी भी उपाय से मदालसा को देखने की इच्छा प्रकट की।

"वत्स, यदि माया के प्रभाव से देखना चाहते हो, तो देखो, यह कहकर नागराज अन्तःपुर के गुप्तगृह से मदालसा को लिवा लाये। अचानक मदालसा को देख राजकुमार विस्मय एवं आनन्द से मूर्च्छित हो भूमि पर गिर पड़े। थोड़ी सेवा-सुश्रूषा के बाद कुमार स्वस्थ हुए। नागराज के पुत्रों को भी यह पता न था कि मदालसा कैसे आ गयी। नागराज ने सबको मदालसा की कहानी सुना दी। ऋतध्वज के अन्तर में आनन्द का स्रोत फूट उठा, मुख पर हंसी फैल गयी। कृतज्ञ दृष्टि से कुमार ने नागराज को प्रणाम किया, मित्रों से विदा ली एवं मदालसा को ले घर की ओर प्रस्थान किया।

उन्हें देख राजा-रानी दोनों अवाक् हो गये। उन्हें और आश्चर्य तब हुआ, जब उन्होंने ऋतध्वज के मुख से सारी बातें सुनी। नगाड़े गूँजने लगे, रालमहल में खुशियाँ लौट आयीं, समग्र राजपुरी में प्रसन्नता के सहस्र दीपक मन्दहास करते नजर आने लगे। राजकुमार एवं मदालसा को देखने के लिए राजमहल के समक्ष लोगों की भीड़ लग गयी।

मदालसा पुनः श्वसुर-सास एवं स्वामी की सेवा करने लगी। मदालसा वैसी ही थी, परन्तु थोड़ी गम्भीर। रानी ने सोचा उम्र में वृद्धि के कारण शायद अब मदालसा गम्भीर हो गयी है।

मनुष्य जब सोता है, तब विभिन्न स्वप्न देखा करता है। परन्तु जागने पर सारे स्वप्न धूमिल हो जाते हैं। परन्तु मानव जबतक सोया रहता है, सपनों में लीन रहता है, तबतक उसे यह पता नहीं रहता कि वह जो कुछ देख रहा है वह मिथ्या है।

जन्म से पूर्व क्या था, मरने के बाद क्या होगा, यह सब नहीं जानने के कारण ही इस संसार की

सारी वस्तुएं मनुष्य को नित्य एवं शाश्वत लगती हैं। जो पूर्व जन्म की बातें, मृत्यु की बातें, मृत्यु के बाद की बातें—सब कुछ जानता है, वही ज्ञानी होता है। वह इस ससार को स्वप्न के सिवा कुछ नहीं समझता।

मदालसा की मृत्यु हो चुकी थी। परन्तु शिव के वर के कारण मृत्यु की बात पूर्वजन्म की घटनाएं—सभी उसे याद थीं। अतः वह शनैः-शनैः ज्ञानी हो उठी। वह सोचती,—शरीर, स्वामी, राजा, धन-सम्पदा कुछ भी नहीं रहेगा। आज जो है, वह कल नहीं दिखेगा। मनुष्य के अन्तर में जो आत्मा है, सिर्फ वही रहेगी। मदालसा मन ही मन इन बातों को सोचती, बाहर कुछ भी प्रकाश नहीं करती। कुछ नहीं बताती, बस संसार के कामों में लीन रहती।

अनेक दिन बीत गये। राजा शत्रुजीत मारे गये, ऋतध्वज राजा बनने के बाद वे प्रजा को सन्तान की भाँति मानते थे। घर-घर में नये राजा की प्रशंसा होती।

इसी समय मदालसा को एक पुत्र हुआ। पुत्र नहीं, जैसे देवपुत्र हो। राजा ने उसका नाम रखा विक्रान्त। शुक्ल पक्ष के चाँद की भाँति विक्रान्त दिन पर दिन बड़ा होता गया। बड़े यत्न के साथ मदालसा उसे पालने लगी। जब वह थोड़ा बड़ा हुआ, तब मदालसा उसे नाना प्रकार की शिक्षा देने लगी। एक दिन विक्रान्त किसी कारणवश भयभीत हो रहा था। मदालसा ने उसे गोद में लेकर प्यार से पूछा, "क्यों रो रहे हो? किससे डर ल ा? तुम्हें कोई नहीं ले सकता, मार नहीं सकता, दुख नहीं दे सकता। तुम कौन हो? तुम यह शरीर मात्र नहीं हो। तुम आत्मा हो। तुम्हारा जन्म नहीं है, मृत्यु नहीं है। तुम्हें भय नहीं है, इस शरीर को महज वस्त्र के रूप में तुमने पाया है। यह एक समय अवश्य नष्ट हो जाएगा, परन्तु उससे तुम्हें कुछ भी क्षति नहीं होगी। तुम्हारा विक्रान्त नाम हमने रखा है। यह तुम्हारा वास्तविक नाम नहीं है। तुम तो इस विराट आनन्द के कण हो, तुम आनन्दमय हो।"

माँ का प्यार पा, माँ की बातें सुनकर विक्रान्त ने रोना बंद कर दिया। शुरू-शुरू में वह मां की बात उतनी अच्छी तरह से नहीं समझता था, परन्तु वे बातें उसे बहुत अच्छी लगतीं। उसके बाद धीरे-धीरे वह माँ के उपदेशों को कुछ हद तक समझने लगा। बगीचे के एक पेड़ पर विक्रान्त के लिए झूला बना दिया गया था। प्रत्येक शाम रानी उसे झूले पर बैठा, हौले-हौले संगीत सुनाता। रानी का स्वर बड़ा मीठा था। रानी की बातें ज्ञानपूर्ण एवं उपदेशपरक हुआ करती थीं।

और थोड़ा बड़ा होने पर विक्रान्त संसार त्याग संन्यासी बन चला गया। बचपन से ही माँ से उपदेश ग्रहण करते-करते उसके मन में सचमुच ज्ञान का उदय हुआ था। वह समझ चुका था कि संसार में कुछ भी हमेशा के लिए न रहेगा, संसार में सब कुछ निस्सार है, सिर्फ धर्म एवं ज्ञान ही एक मात्र सार वस्तु है। यह ज्ञान और धर्म प्रत्येक मनुष्य के अन्दर विद्यमान है। जो इसे प्रकाश करने की चेष्टा करता है, उसी का ज्ञान प्रकाशित होता है।

विक्रान्त संन्यासी बन चला गया। राजा बड़े दुखित हुए। परन्तु उन्होंने रानी को कुछ भी न कहा। रानी ने सोचा कि पुत्र ने ठीक ही किया है। इस समय रानी को और एक पुत्र की प्राप्ति हुई। वह भी विक्रान्त के जैसा ही सुन्दर था। राजा ने प्यार से उसका नाम रखा सुबाहु एवं इस बार भी मदालसा उस नामकरण के बाद मुस्कुरायी।

सुबाहु धीरे-धीरे बड़ा होने लगा। रानी ने विक्रान्त को जिस प्रकार शिक्षा दी थी, ठीक, उसी प्रकार वह उसे भी शिक्षा देने लगी। सुबाहु जब बड़ा हुआ तब वह भी संन्यासी हो चला गया।

मदालसा को तब और एक पुत्र रत्न प्राप्त हुआ। राजा ने उसका नाम रखा अरिन्दम। मदालसा उसे भी विक्रान्त और सुबाहु जैसी शिक्षा देने लगी। बड़ा होकर वह भी संन्यासी बनकर चला गया।

मदालसा को पुनः एक पुत्र हुआ। वह शेष संतान था। राजा गंभीर रूप से चिंतित हो गये। रानी ने एक के बाद एक उसके सारे पुत्रों को संन्यासी बना दिया था। राजा मदालसा को इतना चाहते थे कि वे उसके किसी कार्य में बाधा नहीं पहुँचाना चाहते थे। परन्तु जब रानी ने सारे पुत्रों को संसार त्यागी बना दिया, तब राजा और स्थिर नहीं रह सके। एक दिन राजा ने रानी के पास आकर कहा इससे पहले तीन पुत्रों का जब मैंने नामकरण किया था, तब तुम प्रत्येक बार हँसी थी। क्यों तुमने ऐसा किया था, मैं समझ न सका था। मेरी इच्छा है, इस बार तुम इसका नामकरण करो। और एक विशेष अनुरोध है, तुम्हारी शिक्षा के फलस्वरूप मेरे तीन पुत्र संन्यासी हो गये। इस पुत्र को तुम त्याग की शिक्षा मत दो, संसार की शिक्षा दो।

रानी ने उत्तर दिया, "मैं आपके आदेश का पालन करूँगी। आत्मा का कोई नाम नहीं हो सकता। विक्रान्त, सुबाहु, अरिन्दम आदि नाम आत्मा को नहीं दिया जा सकता। इसलिए मैं हँसी थी। आपने जब कहा है, तब मैं ही इसका नाम रखूँगी एवं संसार-धर्म की शिक्षा दूँगी, त्याग की नहीं।"

रानी ने छोटे पुत्र का नाम रखा अलर्क। अलर्क शब्द का एक अर्थ होता है, पागल कुत्ता। अलर्क धीरे-धीरे बड़ा होता गया। रानी उसे परम यत्न के साथ राज-धर्म, संसार-धर्म एवं गृहस्थ-धर्म की शिक्षा देने लगी। रानी की शिक्षा के फलस्वरूप अलर्क कुछ ही दिनों में विभिन्न विद्याओं में पारंगत हो गया। उसके गुणों एवं विद्या को देख सभी प्रशंसा करते।

अलर्क जब सुयोग्य हुआ, तब राजा ऋतध्वज ने उसे राज-काज सौंप वन को प्रस्थान किया। राजा के साथ मदालसा भी गयी। विदाई लेते वक्त रानी ने अलर्क के हाथ में एक अंगूठी थमाते हुए कहा, "वत्स, संसार धर्म अत्यंत कष्टकर है, राज-धर्म अत्यंत कठिन। यदि किसी दिन तुम्हारे सामने असह्य दुःख उपस्थित हो, तब इस अंगूठी को खोलकर देखना, उसके अन्दर तुम्हारे लिए मैंने एक विशेष वस्तु रख दी है।

राजा होने के पश्चात् अलर्क प्रजा पालन करने लगे। नये राजा के शासन में प्रजा परम सुख के साथ वास करने लगी। प्रजा का आनन्द देख, अलर्क भी अति आनन्दित रहता।

अनेक दिनों बाद, किसी कारणवश अलर्क के मन में बहुत दुःख हुआ। तब माँ की बात याद आयी। हाथ की अगूठी को खोलकर उसने देखा कि उसके अंदर एक छोटे कागज में पतले-पतले अक्षरों में अनेक उपदेश लिखे हुए हैं। उसे पढ़ अलर्क के मन में शांति एवं बल का संचार हुआ। उसने अन्य एक व्यक्ति के ऊपर राज-भार सौंप, दत्तात्रेय ऋषि के आश्रम में धर्म-शिक्षा ग्रहण करने हेतु प्रस्थान किया।

मदालसा ने अपने पुत्र के साथ जो अमूल्य उपदेश लिख दिया था, वह सब पुराण में विस्तृत रूप में लिखा हुआ है। वह सब हिन्दुस्तान के समक्ष चिरकाल के लिए आदरणीय रहेगा। धन्य है मदालसा, और धन्य है वह देश, जिस देश के निवासी मदालसा जैसी माँ की गोद में जन्म ग्रहण करते हैं, एवं धर्म की सच्ची शिक्षा प्राप्त करते हैं।

अध्यात्म विद्या में भारतीय नारियों का योगदान

श्री परशुराम ठाकुर ब्रह्मवादी

भारतीय इतिहास के पर्यवेक्षण और गवेषण से पता चलता है कि आर्यमाताओं की दया से ही हम में थोड़ी-बहुत भी आध्यात्मिकता शेष रह पायी है—भारत के महान् पुरुषों को जन्म देनेवाली भारतीय नारी ही हैं जिन्होंने अपने आध्यात्मिक विशुद्ध जीवन के अमिट संस्कार उनके हृदय और जीवन पर अंकित किये हैं।

ऋग्वेद के अनुशीलन से जान पड़ता है कि आर्यों में स्त्री शिक्षा का यथेष्ठ प्रचार था। स्त्रियाँ वेदाध्ययन करती और कविताएँ भी करती थीं। वे अपने त्याग-तपस्या से ऋषिभाव को भी प्राप्त होतीं और मंत्रों का साक्षात्कार करती थीं। ऋग्वेद के अनेक सूत्रों का आविष्कार स्त्रियों द्वारा ही हुआ है। सूर्य की पुत्री सूर्या ने दशम मण्डल के ८५वें सूत्र का साक्षात्कार किया था। इन्द्राणी इन्द्रदेव की पत्नी हैं। इनका नाम शची भी है। ऋग्वेद के दशम मण्डल सूत्र १४५ की ऋषिका भी ये ही हैं, १५९वें सूत्र की ऋषिका प्रलोभ पुत्री शची कही गयी है। "वाक्" भी एक देवी का नाम है। इन्हें अन्न-जल की दात्री एवं हर्षप्रदायिनी माना गया है। ये अम्भृष ऋषि की पुत्री हैं। दशम मण्डल के १२५वें सूत्र का प्रथम दर्शन इन्होंने ही किया है। वैदिक देवी सूत्र की ऋषिका ये ही हैं ये वाग्देवी ही मित्र और वरुण को धारण करनेवाली धनदात्री, ज्ञानवती, प्राणदायिनी, उपदेशिका तथा आकाश जननी आदि कही गयी है।

इसी प्रकार भारती, होला, सरण्यू, सिनीवाली, राका, गुंगु, असु तथा श्रद्धा आदि देवियों की महिमा का भी यथा स्थान वर्णन है। वैदिक साहित्य के जगत में ब्रह्मवादिनी विदुषी नारियों में गार्गी, सुलभा, मदालसा, वाक, सूर्या, अपाला आदि नाम बहुत ही प्रसिद्ध हैं। महाभारत के शांति पर्व में जनक-सुलभा संवाद को देखने से पता चलता है कि ब्रह्मवेत्ता जनक से बढ़कर ब्रह्मवादिनी सुलभा थीं जिसने वाक्य एवं भाषा के गुण-दोष का निरूपण कर यह साबित कर दिखाया कि आत्मस्वरूप की उपलब्धि कैसे होती है तथा आत्मज्ञानी किसे कहते हैं।

उसने प्रथम बतलाया कि कैसे बोलना चाहिए। बोलने में किस प्रकार के शब्दों का उपयोग करना चाहिए, वाणी में नव-दोष होते हैं और नव-दोष बुद्धि दोष उत्पन्न करते हैं इन अठारह दोषों से बचकर अठारह गुणों से युक्त वाणी ही श्रेष्ठ होती है। वाक्य कैसा होना चाहिए, यह भी उसने बताया। स्पष्ट अर्थयुक्त, द्विव-अर्थ दोष से रहित, आठ गुण वाला वाक्य होना चाहिए। इस प्रकार काम, क्रोध, भय, लोभ, दैन्य, गर्व, दया तथा मान के द्वारा प्रेरित वाक्य भी दूषित होता है।

इसी प्रकार तत्वज्ञान के सम्बन्ध में भी सुलभा ने जनक से आगे कहा कि 'जैसे लाख और काष्ठ जल की धूलि के संयोग से ये पदार्थ परस्पर संधिभूत होते हैं, इसी प्रकार देह से पृथक् आत्मा से शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध—ये तन्मात्राएँ अपनी इन्द्रियों के साथ संश्लिष्ट हैं। अतः किसी का मैं और तू का प्रश्न निरर्थक है। जड़ एवं चेतन के संयोग के मिथ्याज्ञान से मेरे निर्माण की प्रतीति है। तुम्हारी भी प्रतीति ऐसी ही है। चेतन तो एक एवं अविभाज्य है तथा जड़ मेरे, तुम्हारे तथा सभी शरीर में वही है। जैसे रेत के कण एक दूसरे से लगे होने पर भी परस्पर एक-दूसरे को नहीं जानते, वैसे प्राणी भी परस्पर एक-दूसरे को आत्मस्वरूप नहीं जानते, नेत्र अपने को देख नहीं पाता, रसना अपना स्वाद नहीं लेती। कोई अपने को पहचानता नहीं, इन्द्रियाँ भी एक-दूसरे को नहीं जानतीं, जैसे नेत्र बाह्य सूर्य के प्रकाश के बिना वस्तुओं को देखने में असमर्थ है, वैसे ही इन्द्रियों को भी बाह्य पदार्थों की अनुभूति के लिए गुणों की आवश्यकता होती है। पंच कर्मेन्द्रिय, पंच ज्ञानेन्द्रिय, मन, बुद्धि सत्व, अहं, अविद्या, प्रकृति, व्यक्ति, इन्द्रानुभूति की शक्ति, काल, विधि, वीर्य, बल तथा सप्तधा प्रकृति—ये तीस गुण हैं. ये तीसों जहाँ सन्धिभाव में हो, उसे शरीर कहते हैं।

अतः जहां एक ही आत्म तत्व है, वहां स्व और पर कहां ? इस प्रकार तत्वज्ञान का विविध भांति से ब्रह्मवादिनी सुलभा ने जनक को उपदेश दे ब्रह्मवेत्ताओं को भी मात कर दिया था।

ब्रह्मवादिनी रोमशा बृहस्पतिजी की पुत्री थी और भाव-भव्य की धर्मपत्नी थी। इन्होंने ऋग्वेद संहिता के प्रथम मण्डल के १२६वें सूत्र की सात ऋचाओं का संकलन किया है।

मदालसा देवी अपने पुत्रों को जब पालने में सुलातीं थीं उस समय आध्यात्मिक भावनाओं से पूर्ण लोरियां उनको सुनाती थीं।

शुद्धोऽसि बुद्धोऽसि निरंजनोऽसि
संसार मायापरिवर्जितोऽसि
संसारस्वप्नं त्वज मोह निद्रां
मदालसा वाक्यमुवाच पुत्रम् ॥

हे पुत्र : तू शुद्ध है, बुद्ध है, निरंजन है, संसार की माया से रहित है, यह संसार स्वप्न मात्र है। उठ जागृत हो, मोह निन्द्रा को त्याग कर, तू सच्चिदानन्द आत्मा है।

माताओं की पवित्र, उच्च और वीरत्व की भावना का पुत्र की जीवन पर अप्रतिहत प्रभाव पड़ा।

गर्भावस्था में भगवान बुद्ध को शिक्षा देने वाली उनकी पवित्र अन्तःकरण वाली माता थीं। दधीचि, वसिष्ट, याज्ञवल्वय आदि में जो अलौकिक योग बल था उसका कारण उनकी माताएँ थीं। ध्रुव, प्रह्लाद, नारद, भीष्म पितामह, अभिमन्यु, अर्जुन, कर्ण और जगद्गुरु शंकराचार्य में जो अद्भुत भक्ति बल था वह सब आर्यजननी की प्रबल इच्छा और आध्यात्मिक संस्कारों का प्रभाव था।

वेद, पुराण, रामायण, महाभारत, उपनिषद्, विविध इतिहास तथा आख्यान वन्दनीय स्त्रियों की गाथाओं से भरे पड़े हैं, सीता, सावित्री, गान्धारी, कुन्ती, अहिल्या, द्रौपदी. मन्दोदरी, सुनीति, शैब्या, पार्वती, अनुसूया, सती विहुला ये सभी नारियां आध्यात्मिक तेज से परिपूर्ण थीं।

वैसे आध्यात्मिक क्षेत्र में वैदिक मुनि पत्नियों और ब्रह्मवादिनी देवियों की ज्ञान परम्परा और दर्जनों ऋषि कल्पमंत्राविष्कारिणी मुनि-कन्याओं की अलौकिक प्रतिभा आज भी तत्वज्ञों और मनोवैज्ञानिकों की दृष्टि में भारतीय नारी की विचारधारा और कल्पना सृष्टि में जीवित हैं। मिथिला की विदुषियों में 'भारती' का नाम उल्लेखनीय है। वह मण्डन मिश्र की पत्नी थीं। जगद्गुरु शंकराचार्य तथा मण्डन मिश्र में जो शास्त्रार्थ हुआ था, उसमें 'भारती' देवी ने मध्यस्था कर पति के पराजित होने पर स्वयं शंकराचार्य से शास्त्रार्थ किया था। ओइनी वंश के राजा शिव सिंह की धर्मपत्नी लखिमाँ ठाकुराइन परम विदुषी और विद्वत्प्रिय थीं। मैथिल कोकिल वैष्णव कवि विद्यापति ठाकुर इन्हीं के दरबार में रहते थे और प्रायः इन्हीं की प्रेरणा से वैष्णव-भजन लिखते थे। इनके समय में मैथिल साहित्य को बहुत प्रोत्साहन मिला था।

सोलहवीं शताब्दी के बाद 'लखिमा' नाम की एक ओर विदुषी हुई। वह ओइनी वंश के राजा नरसिंह देव की पुत्रवधू और चन्द्रसिंह देव की पत्नी थीं। इनकी न्याय तथा धर्मशास्त्र में विशिष्ट योग्यता थीं। उन्होंने न्याय में अपने स्वामी के नाम पर 'पदार्थचन्द्र' नामक तथा धर्मशास्त्र में विवादचन्द्र वाचक ग्रंथ और पिताक्षरा की टीका रची है।

मैथिल कोकिल म. म. विद्यापति ठाकुर की पुत्रबधू 'चन्द्रकला' भी मैथिली साहित्य में लब्ध प्रतिष्ठित लेखिका मानी जाती हैं। इनके मैथिली भाषा में रचे वैष्णव-पद भी संकलनों में पाये जाते हैं।

मीरा ने आध्यात्मिक जगत में क्रांति लाकर ज्ञानधारा की सगुणभक्ति की प्रेममयी मन्दाकिनी बहा दी।

इसके अतिरिक्त अनेकों ऐसी विदुषियां भारत में थीं जिनके चरित्रों का संकलन करना कठिन और दुर्लभ है।

मैं, विवेकानन्द बोल रहा हूँ !

"....नवयुवको, तुम्हारे ऊपर ही मेरी आशा है। क्या तुम अपनी जाति और राष्ट्र की पुकार सुनोगे ? यदि तुम्हें मुझ पर विश्वास है तो मैं कहूँगा कि तुममें से प्रत्येक का भविष्य उज्ज्वल है। अपने आप पर अगाध, अटूट विश्वास रखो, वैसा ही विश्वास, जैसा मैं बाल्यावस्था में अपने ऊपर रखता था और जिसे मैं अब कार्यान्वित कर रहा हूँ। तुम सभी अपने आप पर विश्वास रखो। यह विश्वास रखो कि प्रत्येक की आत्मा में अनन्त शक्ति विद्यमान है। तभी तुम सारे भारतवर्ष को पुनरुज्जीवित कर सकोगे। .....हमें भारत में बसनेवाली और भारत के बाहर बसनेवाली सभी जातियों के अन्दर प्रवेश करना होगा। इसके लिए हमें कर्म करना होगा। और इस काम के लिए मुझे युवक चाहिए। 'युवक, बलशाली, स्वस्थ, तीव्र नेधावाले और उत्साहयुक्त मनुष्य ही ईश्वर के पास पहुँच सकते हैं।' तुम्हारे भविष्य को निश्चित करने का यही समय है। इसलिए मैं कहता हूँ कि अभी इस भरी जवानी में, इस नये जोश के जमाने में ही काम करो, जीर्ण-शीर्ण हो जाने पर काम नहीं होगा। सबसे अधिक ताजे, बिना स्पर्श किये हुए और बिना सूँघे फूल ही भगवान् के चरणों पर चढ़ाये जाते हैं और वे उसे ही ग्रहण करते हैं। अपने पैरों आप खड़े हो जाओ, देर मत करो, क्योंकि जीवन क्षणस्थायी है। वकील बनकर मुकदमे लड़ने की अभिलाषा रखने से कहीं अधिक महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। अपनी जाति, देश, राष्ट्र और समग्र मानवसमाज के कल्याण के लिए आत्मोत्सर्ग करना इससे बहुत ऊँचा है। इस जीवन में क्या है ?.....जीवन की अवधि अल्प है, पर आत्मा अमर और अनन्त है, और मृत्यु अनिवार्य है। इसलिए आओ, हम अपने आगे एक महान् आदर्श खड़ा करें और उसके लिए अपने जीवन का उत्सर्ग कर दें। यही हमारा निश्चय हो और वे भगवान् जो हमारे शास्त्रों के अनुसार साधुओं के परिमाण के लिए संसार में बार-बार अआविर्भूत होते हैं, वे भगवान् श्रीकृष्ण हमको आशीर्वाद दें एवं हमारे उद्देश्य की सिद्धि में सहायक हों।"

—भारतीय व्याख्यान : २३३-३४

श्री रामकृष्ण कुटीर

अमरकन्टक, जिला-शहडोल (म. प्र.)

पिन—४८४८८६

अपील

प्रिय बन्धु,

"आत्म-मोक्ष एवं विश्व-कल्याण" के महान उद्देश्य की प्राप्ति हेतु रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के संस्थापक-सचिव ब्रह्मलीन श्रीमत् स्वामी आत्मानन्दजी महाराज की प्रेरणा से संस्थापित और उनके मार्गदर्शन में विकसित श्रीरामकृष्ण कुटीर, अमरकन्टक विविध सेवा-कार्यों को करते हुए बारह वर्ष पूर्ण कर लिया है तथा मानव-सेवा को साधना के सशक्त, अंग के रूप में स्वीकार करते हुए निरन्तर प्रगति के पथ पर आरूढ़ है।

ब्रह्मलीन स्वामी आत्मानन्दजी महाराज की बहुत इच्छा थी कि श्रीरामकृष्ण कुटीर एक आदर्श साधना केन्द्र के रूप में विकसित हो। परन्तु स्वामी आत्मानन्दजी महाराज के असमय में ही ब्रह्मलीन हो जाने के कारण यह संभव नहीं हो सका। श्रीरामकृष्ण कुटीर ब्रह्मलीन स्वामी आत्मानन्दजी की इच्छाओं के अनुरूप इस आश्रम का विकास करना चाहता है। इस हेतु हमारी निम्नलिखित योजनाएँ हैं:—

(१) पूज्यपाद ब्रह्मलीन स्वामी आत्मानन्दजी की स्मृति में एक सभा-भवन 'स्वामी आत्मानन्द स्मृति 'सत्संग भवन' के निर्माण की योजना है जहाँ समय-समय पर प्रवचन, सत्संग तथा साधना शिविर आयोजित किये जायेंगे। इसमें ५ लाख रुपयों का व्यय अनुमानित है।

(२) आश्रम का भोजन-कक्ष भी जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है तथा आश्रम की आवश्यकता से बहुत छोटा है। इसके पुनर्निर्माण में १.५० लाख रुपयों का व्यय अनुमानित है।

(३) आश्रम में जल का संकट है। इसके लिए कुँआ/नलकूप की आवश्यकता है। इसमें ५० हजार रुपयों का व्यय अनुमानित है।

(४) आश्रम के पुस्तकालय के विकास के लिए १ लाख रुपयों की आवश्यकता है।

आप सबसे अनुरोध है कि हमारी योजनाओं में यथाशक्ति सहयोग प्रदान कर हमें अनुगृहीत करें। चेक/ड्राफ्ट/मनिआर्डर श्रीरामकृष्ण कुटीर, अमरकन्टक के नाम से भेजे जा सकते हैं।

भवदीय

स्वामी विश्वात्मानन्द

सचिव

श्री रामकृष्ण कुटीर को प्रदत्त दान आय-कर अधिनियम की धारा ८० (जी) के अन्तर्गत आयकर से मुक्त है।

बैद्यनाथ च्यवनप्राश

अब पोलीजार में उपलब्ध

शोष

कास, श्वांस नाशक

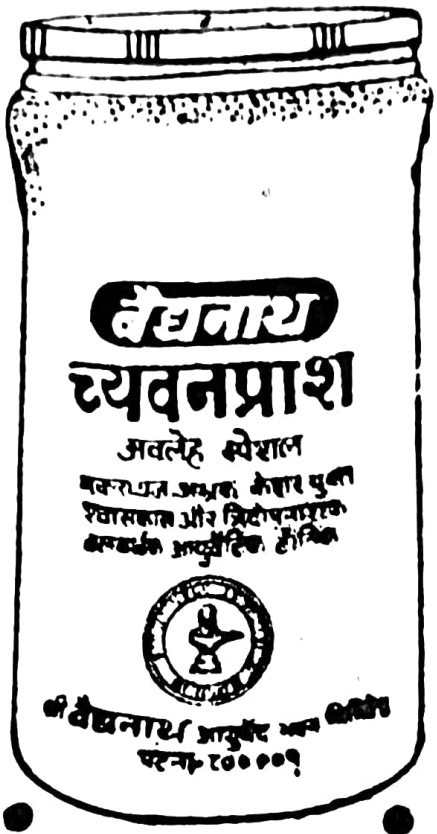

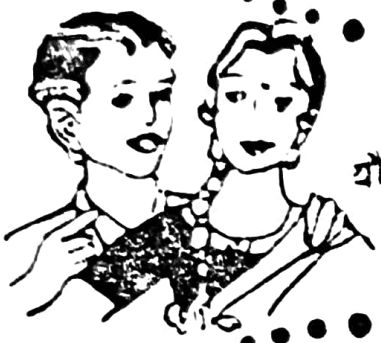

यौवन

दिमागी ताजगी

विकास

बलवर्द्धक

आदर्श आयुर्वेदिक पारिवारिक टानिक

कहीं आपके डिब्बे में "मोपेड" तो नहीं ?

प्रत्येक एक किलो स्पेशल और साधारण एवं ५०० ग्राम स्पेशल च्यवनप्राश के डिब्बे में इनामी कूपन प्राप्त कर "मोपेड" एवं ३०५ अन्य पुरस्कार प्राप्त करने का सुनहरा अवसर ।

वैद्यनाथ ७०० से अधिक दवाएं पांच आधुनिक कारखानों में तैयार करता

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-९

डाक पंजीयित संख्या — बी. एच. पी. [illegible]

स्वामी विवेकानन्दकृत सम्पूर्ण साहित्य

पुस्तक	मूल्य
योग	
ज्ञानयोग	१४.००
राजयोग (पातञ्जल योगसूत्र, सभाष्य और व्याख्यासहित)	९.००
प्रेमयोग	६.००
कर्मयोग	६.००
भक्तियोग	६.००
ज्ञानयोग पर प्रवचन	२.००
सरल राजयोग	२.००
धर्म तथा अध्यात्म	
धर्मविज्ञान	५.००
धर्मतत्त्व	४.५०
धर्मरहस्य	१३.००
हिन्दूधर्म	६.००
हिन्दूधर्म के पक्ष में	२.००
शिकागो वक्तृता	१.५०
नारदभक्तिसूत्र एवं भक्तिविषयक प्रवचन और आख्यान	३.००
भगवान श्रीकृष्ण और भगवद्गीता	५.००
भगवान बुद्ध तथा उनका सन्देश	२.००
देववाणी (उच्च आध्यात्मिक उपदेश)	१२.००
कवितावली (आध्यात्मिक अनुभूतिमय काव्य)	४.००
वेदान्त	६.२५
व्यावहारिक जीवन में वेदान्त	३.५०
आत्मतत्त्व	३.५०
आत्मानुभूति तथा उसके मार्ग	५.००
मरणोत्तर जीवन	१.५०
जीवनी	
महापुरुषों की जीवनगाथाएँ	६.००
मेरे गुरुदेव	२.५०
ईशदूत ईसा	१.००
पवहारी बाबा	२.००

पुस्तक	मूल्य
सम्भाषणात्मक	
विवेकानन्दजी के संग में	१३.००
स्वामी विवेकानन्दजी से वार्तालाप	५.००
विवेकानन्दजी का संस्मरण	५.००
विवेकानन्दजी के सान्निध्य में	३.००
विविध	
विवेकानन्द साहित्य संचयन (महत्त्वपूर्ण व्याख्यान, लेख, पत्र काव्य आदि का प्रतिनिधिक संचयन)	२५.००
,, (सस्ता संस्करण)	१५.००
पत्रावली — (धर्म, दर्शन, शिक्षा, समाज राष्ट्रोन्नति इत्यादि सम्बन्धी स्फूर्तिदायी पत्र)	२१.००
भारतीय व्याख्यान	२०.००
भारत का ऐतिहासिक क्रमविकास एवं अन्य प्रबन्ध	४.००
हमारा भारत	१.५०
वर्तमान भारत	२.५०
नया भारत गढ़ो	२.५०
भारतीय नारी	४.००
जाति, संस्कृति और समाजवाद	४.००
शिक्षा	५.५०
सार्वलौकिक नीति तथा सदाचार	३.५०
मन की शक्तियाँ तथा जीवन-गठन की साधनाएँ	१.५०
विविध प्रसंग	९.००
चिन्तनीय बातें	४.००
परिव्राजक (मेरी भ्रमणकहानी)	४.५०
प्राच्य और पाश्चात्य	४.५०
युवकों के प्रति	१०.००
विवेकानन्द — राष्ट्र को आह्वान (पॉकेट साईज)	१.२५
शक्तिदायी विचार (,,)	१.००
सूक्तियाँ एवं सुभाषित (,,)	१.००
मेरी समर-नीति (,,)	१.००
मेरा जीवन तथा ध्येय (,,)	१.००

प्रकाशक : रामकृष्ण मठ, धन्तोली, नागपुर—४४००१२

श्रीमती गंगा देवी, जयप्रकाश नगर, छपरा (बिहार) द्वारा प्रकाशित एवं
श्रीकांत लाभ द्वारा जनता प्रेस, नया टोला, पटना — ४ में मुद्रित।